भगवान महावीर के २५००वें परिनिर्वाण के उपलक्ष में प्रकाशित

शाकम्भरी प्रदेश के सांस्कृतिक विकास में जैनधर्म का योगदान

लेखक
डा० कस्तूरचन्द कासलीवाल
एम०ए० शास्त्री, पी-एच.डी.

प्रकाशक
गुलाबचन्द गंगवाल
संयोजक
श्री श्रीलाल गंगवाल परमार्थिक ट्रस्ट
रेनवाल, (किशनगढ़)

प्राप्ति स्थान :
श्री श्रीलाल गंगवाल परमार्थिक ट्रस्ट
रेनवाल (किशनगढ़) जयपुर राज.

प्रथम आवृत्ति
५००

मूल्य ५) रुपये

मुद्रक .
मनोज प्रिन्टर्स
गोदीको का रास्ता, किशनपोल बाजार,
जयपुर-३ (राज०)

प्रकाशकीय

"शाकम्भरी प्रदेश के सास्कृतिक विकास मे जैनधर्म का योगदान" पुस्तक को पाठको के हाथो मे देते हुए हमे अत्यधिक प्रसन्नता है। प्रस्तुत पुस्तक का प्रकाशन श्री श्रीलाल गगवाल पारमार्थिक ट्रस्ट फड रेनवाल (किशनगढ) की ओर से हो रहा है।

इस ट्रस्टफड के सस्थापक स्वर्गीय श्रीमान सेठ श्रीलाल जी गगवाल (किशनगढ रेनवाल) के प्रतिष्ठित गंगवालपरिवार (श्रीमान स्व सेठ महाचद जी गगवाल, श्री फूलचन्द जी गगवाल, श्री चादमल जी गँगवाल) के पूर्वज थे। आप विक्रम स० १९६५ मे आजीविकार्थ आसाम मे डिब्रुगढ गए व करीब २५ वर्ष तक वही पर व्यापारिक सेवा मे जीवन विताया। विक्रम स १९९० मे आपका स्वर्गवास डिब्रुगढ मे हुआ। चूकि आपके कोई सन्तान नही थी अत मृत्यु समय मे आपने जो कुछ अपनी अल्प सम्पत्ति डिब्रुगढ मे छोडी उसके लिए अतिम समय मे 'श्री रगलाल रामेसुर डिब्रूगढ' की फर्म के मालिक श्री रगलाल जी सरावगी से यह हार्दिक इच्छा प्रकट की कि मेरी सपत्ति मे से मेरे क्रियाकर्म सस्कार मे खर्च होने के वाद जो सम्पत्ति वचे उसको पारमार्थिक कार्यो मे लगा दिया जावे व जहां तक हो सके इसका सदुपयोग मेरी जन्म भूमि किशनगढ–रेनवाल मे किया जावे।

तदनुसार आपकी मृत्यु के पश्चात्–श्रीरगलाल जी सरावगी डिवूगढ के पास आपकी वची हुई सपत्ति ४००० रू शेप रहे। श्री सरावगी जी ने उक्त सम्पत्ति को 'श्री श्रीलाल गगवाल पारमार्थिक ट्रस्टफड' के नाम से अकित करके जैन समाज के तत्कालीन निम्नलिखित प्रमुख व्यक्तियो को उक्त ट्रस्ट का ट्रस्टी मनोनीत किया—

१ श्रीमान स्व सेठ गभीरमल जी पाड्या कलकत्ता
२ ,, ,, ,, प्रभुलालजी पाडया ,,
३ ,, ,, ,, वावू मानिक चदजी वैनाडा,,
४ ,, ,, ,, भवरीलाल जी वाकलीवाल डिब्रुगढ
५ ,, ,, प० इद्रलालाल जी शास्त्री जयपुर

६. श्रीमान स्व सेठ महाचद जी गगवाल किशनगढ–रेनवाल
७ ,, ,, ,, वालावक्सजी वाकलीवाल ,,

इस ट्रस्ट के मत्री श्रीमान वावू मानिक चदजी वैनाडा नियुक्त किए गए व ट्रस्ट फड के उद्देश्यो मे यह घोषणा की गयी कि फड की मूल रकम ४०००) सुरक्षित रख कर के इसका व्याज पारमार्थिक व धार्मिक कार्यो मे स्वर्गीय आत्मा की इच्छानुसार खर्च किया जाये ।

जव तक श्री वा.मानिक चन्दजी वैनाडा जीवित रहे तव तक इसका सचालन सुयोग्य रीति से करते रहे व आपकी मृत्यु के वाद श्रीमान स्व० सेठ भवरीलाल जी वाकलीवाल लालगढ निवासी के कधो पर इसके सचालन का भार पडा तथा आप इसके मत्री नियुक्त हुए । वाकलीवाल जी ने करीव २४ वर्ष तक ट्रस्ट फड के व्याज का सदुपयोग तत्कालीन चल रहे श्री महावीर दि० जैन विद्यालय किशनगढ को देकर किया । जव विद्यालय २० वर्ष चलने के वाद वद हो गया तव इसका व्याज किशनगढ के श्री दि० जैन दातव्य औपधालय को कुछ समय तक मिला व अन्य जगह के पारमार्थिक कार्यो मे उसका उपयोग होता रहा ।

दुर्भाग्य से वर्तमान मे ट्रस्टफड के उक्त सातो ही ट्रस्टियो का स्वर्गवास हो चुका है व श्रीमान स्व० सेठ भवरीलाल जी वाकलीवाल ने अपने जीवनकाल मे ही ट्रस्ट के मत्रीत्व का भार अपने कधो से हटाकर श्री गुलावचद गगवाल को ट्रस्टी वनाकर उसका सयोजक नियुक्त किया तथा सीतारामजी पाटनी कलकत्ता व श्रीमान वुधमल जी ठोल्या रेनवाल को ट्रस्ट कमेटी की मीटिंग मे ट्रस्टी नियुक्त किया गया । उसके वाद मे ट्रस्टियो की मीटिंग मे दो ट्रस्टी और नियुक्त किये गये इस प्रकार वर्तमान मे निम्न ५ महानुभावो की ट्रस्ट कमेटी उक्त ट्रस्टफड का देखभाल कर रही है—

१ श्री सेठ सीताराम जी पाटनी रेनवाल (फर्म—कन्हैयालाल सीताराम कलकत्ता)

२. ,, वावू फूलचन्दजी पाटनी कलकत्ता
३ ,, सेठ वुधमलजी ठोलिया (फर्म टीमकचन्द जैन) रेनवाल
४ ,, सेठ जयचन्द लालजी सेठी रेनवाल
५. ,, गुलावचन्द गगवाल रेनवाल (सयोजक)

इस ट्रस्टफड की मूल रकम ४०००) के ४०० यूनिट (यूनिट ट्रस्ट आफ इन्डिया) ट्रस्ट के सयोजक श्री गुलावचन्द जी गगवाल के नाम से खरीदे हुए है ।

ट्रस्टफड की रकम के व्याज के आज तक कितने रूपये पारमार्थिक कार्यो मे लग चुके हैं इसका हिसाब तो हमारे पास नही है क्योकि इसके भूतपूर्व सदस्य व मन्त्री श्रीमान् स्व० सेठ भंवरीलाल जी वाकलीवाल से पहले के हिसाव की विगत मिल नही सकी। उनसे हमे सिर्फ ४०००) के यूनिट ही प्राप्त हुए है। व्याज के रूपये जितने थे वे सव ट्रस्ट के उद्देश्य के अनुसार पारमार्थिक कार्यो मे लगाए जा चुके थे।

उसके वाद के व्याज के रुपयो के हिसाव मे से ट्रस्टियो की मीटिंग के निर्णय के अनुसार श्री १००८ श्री भगवान महावीर के २५०० वे निवार्णोत्सव के समय यह उपयोगी पुस्तक प्रकाशित की जा रही है।

पुस्तक के लेखक समाज के सुप्रसिद्ध व सुपरिचित विद्वान् डा० कस्तूरचन्दजी कासलीवाल हैं आपने हमारे अनुरोध को स्वीकार करके इस पुस्तक को लिखने की स्वीकृति प्रदान को इसके लिए ट्रस्ट अपका हार्दिक आभारी है। इस पुस्तक से देश मे जैन सस्कृति के प्रचार व परिचय प्राप्त करने मे यत्किंचित् भी योगदान मिला तो ट्रस्टफड अपने इस कार्य को सफल समझेगा।

दीपावली
वीरनिर्वाणोत्सव
२५००
विक्रम स २०३१

गुलावचन्द गगवाल
सयोजक श्री श्रीलाल गगवाल
पारमार्थिक ट्रस्टफंड
(रेनवाल किशनगढ)

दो शब्द

राजस्थान का प्रत्येक सभाग इतिहास एव पुरातत्व की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण है। जैनधर्म, साहित्य एव पुरातत्व की दृष्टि से अभी तक इस प्रदेश का अध्ययन नही हो सका है। इसलिये मेरी यही हार्दिक इच्छा रही है कि तहसील स्तर तक स्मारिकाये प्रकाशित हो जिनमे प्रत्येक तहसील मे उपलब्ध होने वाली सामग्री पर विस्तृत प्रकाश डाला जा सके। क्योकि पूरे राजस्थान पर लिखी जाने वाली पुस्तको मे उनका पूरा अध्ययन नही किया जा सकता। शाकम्भरी प्रदेश की गणना राजस्थान के प्राचीनतम प्रदेशो मे से है इसलिये जब श्रीमान् गुलाबचन्द जी गगवाल मेरे से करीब एक वर्ष पूर्व मिले और किसी पुस्तक के प्रकाशन का विचार व्यक्त किया मैंने उनसे 'शाकभरी प्रदेश के सास्कृतिक विकास मे जैनधर्म का योगदान' पुस्तक को प्रकाशित कराने का सुझाव रखा तथा पुस्तक की सामान्य रूपरेखा बना कर उन्हे दे दी। कुछ समय पश्चात् गगवाल साहब ने पुस्तक प्रकाशन के प्रस्ताव को स्वीकृत कर लिया और उसी के फलस्वरूप यह पुस्तक पाठको के सामने प्रस्तुत है। साहित्य निर्माण के अन्य कार्यों मे व्यस्त रहने के कारण इसके लेखन मे भी पर्याप्त विलम्ब हुआ। अब पुस्तक तैयार होकर पाठको के सामने पहुच रही है इसी पर मुझे पूर्ण प्रसन्नता है।

पुस्तक मे शाकम्भरी प्रदेश मे उपलब्ध होने वाली सभी सामग्री पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है। वास्तव मे यह प्रदेश जैनधर्म, पुरातत्व एव साहित्य की दृष्टि से अत्यधिक गौरवशाली प्रदेश रहा है। यहा पर होने वाले जैन सन्तो विशेषत भट्टारको ने मध्ययुग मे इस प्रदेश को किस प्रकार अपनी गतिविधियो का केन्द्र बनाया इस पर भी प्रकाश डाला गया है। भट्टारको के अतिरिक्त यह प्रदेश जैन पुरातत्व का विशाल भण्डार रहा है और नरायणा के भूगर्भ से प्राप्त प्राचीन मूर्तिया इसका स्पष्ट प्रमाण है। नागौर एवं अजमेर शास्त्र भण्डारो का राजस्थान मे ही नही किन्तु समस्त देश मे गौरवशाली स्थान है। मोजमाबाद मे सवत् १६६४ मे होने वाले विशाल मन्दिर का निर्माण एव उसकी पचकल्याणक प्रतिष्ठा राजस्थान मे

होने वाली पचकल्याणक प्रतिष्ठाओ मे सर्वाधिक लोकप्रिय प्रतिष्ठा मानी जाती है जिसमे सहस्तो की सख्या मे पाषाण की विशाल मूर्तियो की प्रतिष्ठा हुई थी। १८वी शताब्दि मे होने वाले बहुचर्चित विद्वान् महापडित टोडरमल जी का इस प्रदेश से निकट का सम्बन्ध रहा है। मेरी ऐसी धारणा है कि उनके बाल्यकाल का कुछ भाग जोबनेर मे व्यतीत हुआ था। इस प्रकार पुस्तक मे मैंने अधिक से अधिक उपलब्ध सामग्री पर प्रकाश डालने का प्रयास किया है आशा है विद्वानो एव पाठको को वह रुचि कर लगेगा।

मैं श्री श्रीलाल गगवाल पारमार्थिक ट्रस्ट फण्ड के सभी सदस्यो एव उसके मन्त्री श्री गुलाबचन्द गगवाल का आभारी हू जिन्होने प्रस्तुत पुस्तक को ट्रस्ट फड की ओर से प्रकाशित की हैं। मैं मेरे सहयोगी विद्वान् प अनूपचन्द जी न्यायतीर्थ का भी हृदय से आभारी हू जिनका पुस्तक की सामग्री सकलन मे पर्याप्त सहयोग मिला है। अन्त मे मैं डा शम्भुसिह मनोहर एव श्री रामवल्लभ सोमानी का भी आभार व्यक्त किये विना नही रह सकता जिनके सहयोग से जोबनेर एव साभर के सम्बन्ध मे सामग्री प्राप्त हुई है।

दिनाक १३ नवम्बर, १९७४ **डा. कस्तूरचन्द कासलीवाल**

आचार्य कल्प १०८ श्री श्रुतसागर जी महाराज का शुभाशीर्वाद

बरसाती नदियो के प्रवाह की भांति वर्तमान युगीन बहाव मे न बहकर आरातीय आचार्यो द्वारा प्रतिपादित मार्ग पर अटल श्रद्धान व सामाजिक बन्धनो की रक्षा करते हुए आप जिस ऐतिहासिक पुस्तक का निर्माण कर रहे हैं उसमे आपको सफलता प्राप्त हो यही हमारा आशीर्वाद है।

विषय-सूची

१ प्रकाशकीय

२ दो शब्द

३ आशीर्वाद

४. प्रस्तावना—गौरव गाथा १–७

५. प्रथम अध्याय ८–३२

(क) जैन सस्कृति के प्रमुख नगर

१ नागौर (१०-१३) २ शाकम्भरी (१३-१५) ३ अजमेर (१५-१८) ४ नरायणा (१८-१९) ५ मोजमाबाद (१९-२३) ६ मारोठ (२३-२५) ७ जोबनेर (२६-२९) ८. रूपनगढ (२९) ९ कालाडेहरा (२९-३०) १० भादवा (३१) ११ दूदू (३१) १२ रेनवाल—किशनगढ (३१-३२)

६ द्वितीय अध्याय ३८–६०

(I) भट्टारक गादिया (३३-३८)

(II) प्रमुख जैन सन्त—भ प्रभाचन्द्र (३८-३९) भ पद्मनन्दि (३९-४०) भ धर्मकीर्ति (४०) भ विशालकीर्ति (४०-४१) भ लक्ष्मीचन्द्र (४१) भ. सहस्रकीर्ति (४१) भ नेमिचन्द (४१) भ यश कीर्ति (४१) भ भानुकीर्ति (४२) भ श्रीभूषण (४२) भ धर्मचन्द्र (४३) भ. देवेन्द्रकीर्ति (४३) भ अमरेन्द्रकीर्ति (४३) भ रत्नकीर्ति (४३) भ विजयकीर्ति (४४) भ भुवनकीर्ति (४५) प मेधावी (४५) ब्रह्म रायमल्ल (४६) छीतर ठोलिया (४७) महापडित टोडरमल (४७) प दामोदर (४८) दयाराम सोनी (४८) तेजपाल (४९) प. जिनदास (४९) प रामलाल (५०) प चैनसुखदास (५०)

(III) शास्त्र भण्डार—भ शास्त्र भण्डार अजमेर (५०-५२) भट्टारकीय शास्त्र भण्डार नागौर (५२-५३) दि. जैन शास्त्र भण्डार मोजमावाद (५३-५४) शास्त्र भण्डार दि. जैन मन्दिर नरायणा (५४-५५) शास्त्र भण्डार

दिगम्बर जैन मन्दिर साभर (५६) शास्त्र भण्डार दि जैन मन्दिर दूदू (५६)

(IV) काव्य—पासणाहचरिउ (५७) सभवणाहचरिउ (५७) वरागचरिउ (५७) होलीरेणुका चरित्र (५७-५८) गौतमस्वामी चरित्र (५८) धर्मसग्रह श्रावकाकार (५६) ज्येष्ठ जिनवर कथा (५६) चतुदर्शी चौपाई (५६-६०) होली की कथा [६०]

७. तृतीय अध्याय—प्रसिद्ध जैन मन्दिर ६१-६८

साभर के दिगम्बर जैन मन्दिर [६१-६२]

नरायणा के दि जैन मन्दिर (६२-६३) दिगम्बर जैन छोटा मन्दिर नरायणा [६४-६५] रणथम्भौर एव शेरपुर के दिगम्बर जैन मन्दिर [६५-६६] मोजमाबाद के मन्दिर [६७-६८]

८ चतुर्थ अध्याय— ६६-७४

प्रदेश की वर्तमान स्थिति [६६-७०] प्रमुख समाज सेवी [७१-७३] अवशिष्ट [७४]

नामानुक्रमणिका ७५

प्रस्तावना

गौरव गाथा—

राजस्थान प्रदेश का देश के इतिहास मे महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस प्रदेश की साहित्यिक एव सास्कृतिक विरासत ने देश के विकास मे उल्लेखनीय योगदान दिया है। राजस्थान के शूरवीरो ने मातृभूमि की रक्षा के लिये अपने प्राणो को न्योछावर करने मे अपने जीवन की सबसे बडी उपलब्धि स्वीकार की है। इस प्रदेश के रणथम्भोर, चित्तौड, कुशलगढ, भरतपुर एव माण्डेर जैसे दुर्ग वीरता के ही प्रतीक नही माने जाते किन्तु बलिदान की कहानी के भी ज्वलन्त उदाहरण है। वीरता यहा की मिट्टी के कण-कण मे समाहित रही है और देश अथवा मातृभूमि पर विपत्ति आने पर जीवन उत्सर्ग की कहानी की सैकडो बार पुनरावृत्ति हुई है। किन्तु बलिदान अथवा उत्सर्ग की साथ-साथ यहा की मिट्टी मे पैदा होने वाले वीरो, बुद्धिजीवियो, सन्तो एव शासको ने निर्माण की कहानी को भी पचासो बार दोहराया है। यहा के कण कण मे साहित्यिक एव सास्कृतिक विकास को गतिशीलता देने मे स्फूर्ति एव उत्साह देखा गया है। राजस्थान के पचासो मन्दिर देश की सास्कृतिक विरासत के लिये महान् धरोहर है तथा यहा के ग्रन्थागार साहित्यिक धरोहर के महान् प्रतीक है। जिस प्रकार महाराणा प्रताप समूचे राजस्थान की वीरता के प्रतीक है उसी प्रकार जैसलमेर, जयपुर, अजमेर एव नागौर के ग्रन्थ भण्डार सरस्वती के वरद पुत्रो की कहानी प्रस्तुत करने वाले है। इसे भट्टारक पद्मनन्दि, सकलकीर्ति जैसे शीर्षस्थ सन्तो की विहार भूमि होने का गौरव प्राप्त हो चुका है। न जाने कितने जन्मो की साधना के पश्चात् महापडित टोडरमल ने राजस्थान मे जन्म लेकर साहित्यिक एव सामाजिक क्राति का बिगुल बजाया था तथा महाकवि दौलतराम ने समूचे देश मे पद्मपुराण, हरिवशपुराण, अध्यात्मबारहखडी एव विवेकविलास जैसे ग्रन्थो का निर्माण करके स्वाध्याय की परम्परा को पुन जीवित किया था।

वीरो का प्रदेश अथवा उनकी जन्मस्थली होने के साथ राजस्थान भगवान महावीर द्वारा प्रतिपादित अहिंसा का सबसे अधिक समर्थक रहा। यहा के शासको एव शासितो दोनो ने ही श्रमण सस्कृति को पल्लवित करने मे अपना पूरा योग दिया तथा युद्ध एव शान्ति दोनो ही काल मे अहिंसा को अपने जीवन मे उतारा। जो जितना अहिंसक एव अपरिग्रही रहा उसकी उतनी ही अधिक पूजा की गयी।

राजस्थान मे धर्म कभी किसी के विकास मे बाधक नही बना । जैनधर्म राज्याश्रित धर्म नही होने पर भी यहा का लोकप्रिय धर्म रहा और अन्य धर्मो के साथ पल्लवित होता रहा । सम्प्रदायवाद से यह धर्म सदा ही कोसो दूर रहा और शान्तिपूर्ण सह अस्तित्व मे अपनी दृढ आस्था रखी । यही कारण है कि राजस्थान मे जैन सस्कृति की जितनी सामग्री उपलब्ध होती है उतनी देश के किसी भाग मे नही मिलती। जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, बीकानेर जैसे राजस्थान के भूतपूर्व राज्यो के शासन मे जैनो का सबस अधिक योग रहा और सैकडो वर्षो तक उन्होने इन प्रदेशो के शासन मे अपना वर्चस्व बनाये रखा । अहिंसक धर्म के कट्टर अनुयायी होने पर भी समय आने पर उन्होंने युद्ध से मुख नही मोडा और फिर या तो विजय प्राप्त करके ही युद्धस्थल से लौटे या फिर हसते-हसते मातृभूमि पर अपने प्राण विसर्जित कर दिये । महावीर की अहिंसा वीरो का धर्म है इस उक्ति को सदा ही सत्य सिद्ध करने का प्रयास किया ।

राजस्थान मे जैनधर्म, सस्कृति एव साहित्य को पल्लवित करने के लिए प्रारम्भ से ही निश्चित कदम उठाये जाते रहे । जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, बीकानेर, सिरोही, टोक, पाली, कोटा, बू दी एव झालावाड जैसे जिले जैनो की घनी आबादी वाले जिले माने जाते रहे है । इन जिलो मे जैन सस्कृति के प्रतीक तीर्थ, मन्दिर, शास्त्र भण्डार एव जनहित के लिये सस्थापित धर्मशालाए, औषधालय, विद्यालय एव कालेज जितनी सख्या मे है वे सब जैन सस्कृति के उच्च आदर्शो की ओर स्पष्ट सकेत है । वास्तव मे राजस्थान मे जैनधर्मावलम्बी अन्य समाजो के साथ इस तरह घुलमिल गये हे कि कभी-कभी उन्हे पहिचानना भी कठिन हो जाता है ।

राजस्थान मे अनेक आचार्य, भट्टारक एव साधु हुए जो जीवन पर्यन्त भारतीय सस्कृति के प्रमुख प्रवक्ता रहे । ऐसे आचार्यो मे उमास्वामी, समन्तभद्र, अकलक, हरिभद्रसूरि, सिद्धसेन, विद्यानन्द, प्रभाचन्द्र आदि के नाम उल्लेखनीय है जिन्होने राजस्थान की भूमि को अपने विहार से पावन किया था और भगवान महावीर के प्रमुख सिद्धान्त अहिसा एव अनेकान्त का प्रतिपादन किया । जम्बूदीप-पण्णत्ति के रचयिता आचार्य पद्मनन्दि राजस्थानी सत थे जिन्होने प्राकृत भाषा मे जम्बूद्वीप पर विस्तृत प्रकाश डाला है । २३९८ प्राकृत गाथा वाली इस कृति मे आचार्यश्री ने जम्बूद्वीप की भौगोलिक स्थिति एव उसमे उपलब्ध पहाड, नदी, वन एव मनुष्य समाज के सम्बन्ध मे जो लिखा हे वह अवर्णनीय है तथा उनकी गहरी विद्वत्ता एव ज्ञान का सूचक है । इस ग्रन्थ की रचना बारा मे हुई थी । ८वी शताब्दी मे होने वाले हरिभद्रसूरि राजस्थान के दूसरे आचार्य थे जो प्राकृत एव सस्कृत के प्रकाड विद्वान् थे । इनका सम्बन्ध चित्तौड से था । १३वी शताब्दि से लेकर १९वी शताब्दि तक राजस्थान मे भट्टारक परम्परा का बहुत जोर रहा और भट्टारक पद्मनंदि, प्रभाचन्द्र,

सकलकीर्ति, शुभचन्द्र, जिनचन्द्र, ज्ञानभूषण से लेकर नरेन्द्रकीर्ति, सुरेन्द्रकीर्ति एव देवेन्द्रकीर्ति जैसे समर्थ एव प्रभावशाली भट्टारक हुए जो राजस्थान के सास्कृतिक धरातल को पल्लवित करते रहे। ये भट्टारक अगाध ज्ञान के धारक होते थे तथा तप एव तेजोमय व्यक्तित्व के धनी होते थे। उन्होने राजस्थान के सास्कृतिक विकास मे जितना योग दिया उससे राजस्थान कभी उऋण नही हो सकता। इन भट्टारको के प्रमुख केन्द्र थे चाटसू (चम्पावती) टोडारायसिह (तक्षकगढ) आमेर, सागानेर, मारोठ, जोबनेर, नागौर, अजमेर, जयपुर एव श्रीमहावीरजी। इन्होने अपने विहार से सारे राजस्थान को पावन किया और महावीर के सिद्धान्तो को जन जन तक पहुचाया। मोजमाबाद (सवत् १६६४) जोबनेर (१७५१) मारोठ (१७९४) सवाईमाधोपुर (१८२६) अजमेर (१८५२) जयपुर (१८६१) जैसे नगरो मे विशाल सास्कृतिक प्रतिष्ठा विधानो के माध्यम से जितने आयोजन हुए उन सब मे इन भट्टारको का प्रमुख योगदान रहा।

राजस्थान के मन्दिरो मे उपलब्ध एव प्रतिष्ठापित ग्रन्थ सग्रहालय भारतीय सस्कृति एव विशेषत जैन साहित्य एव सस्कृति के प्रमुख केन्द्र है। राजस्थान मे ऐसे शास्त्र भण्डारो की सख्या सैकडो मे होगी और उनमे सग्रहीत पाण्डुलिपियो की सख्या तो लाखो मे होगी। राजस्थान के इन भण्डारो मे तीन लाख से भी अधिक ग्रन्थो का सग्रह उपलब्ध होता है। येशास्त्र भण्डार प्रत्येक ग्राम एव नगर मे जहा भी मन्दिर हैं, स्थापित है और भारतीय वाङ्मय को सुरक्षित रखने का महान् दायित्व लिए हुए है ऐसे स्थानो मे जयपुर, नागौर, जैसलमेर, बीकानेर, उदयपुर, अजमेर, रिषभदेव, भरतपुर, बूदी एव कुचामन आदि नगरो के नाम विशेषत उल्लेखनीय हैं। वास्तव मे इन ज्ञानभण्डारो ने साहित्य की सैकडो अमूल्य निधियो को नष्ट होने से बचा लिया। अकेले जैसलमेर के ज्ञान भण्डारो को देखकर कर्नल टॉड, डा० बूहलर, डा० जैकोबी जैसे पाश्चात्य विद्वान् एव भण्डारकर, दलाल जैसे भारतीय विद्वान् आश्चर्य चकित रह गये थे और इन्हे ऐसा अनुभव होने लगा था कि मानो उनकी वर्षो की साधना पूरी हो गई हो। यदि इन विद्वानो को उस समय नागौर, अजमेर एव जयपुर के ग्रन्थ भण्डारो को देखने का सौभाग्य मिल जाता तो सभवत उनका साहित्यिक धरोहर को देख कर नाच उठते और फिर न जाने जैन आचार्यो की साहित्यिक सेवाओ पर कितनी श्रद्धाञ्जलियाँ अर्पित करते। स्वय लेखक को राजस्थान के १०० से भी अधिक ग्रन्थ भण्डारो को देखने का अवसर प्राप्त हुआ है लेकिन इन भण्डारो की गरिमा एव महत्ता का पता लगाना कठिन है। यदि मुसलिम युग में धर्मान्ध शासको द्वारा इन शास्त्र भण्डारो का विनाश नही किया जाता तथा हमारी स्वय की लापरवाही से सैकडो हजारो ग्रन्थ चूहो, दीमक एव

मीलन में नष्ट नहीं होते तो पता नहीं आज कितनी अधिक संख्या में इन भण्डारों में पाण्डुलिपियाँ उपलब्ध होती। फिर भी जो कुछ अवशिष्ट है वही हमारे अतीत पर उज्ज्वल प्रकाश डालती है और उसी पर हम गर्व कर सकते है।

राजस्थान के सांगानेर, केशोरायपाटन, झालरापाटन, आमेर आवां, नागनाला, ऋषभदेव, श्रीमहावीरजी, नादसेड़ी, ओसियां, जयपुर एवं रणकपुर के जैन मन्दिर एवं उनमें प्रतिष्ठित मूर्तियां स्थापत्य एवं मूर्तिकला के उत्कृष्ट उदाहरण हैं तथा जिनके दर्शन करने से किसी भी भारतीय का मस्तक गर्व से उन्नत हो सकता है। वास्तव में ये कलापूर्ण मन्दिर यथा है मानों वे देश के सांस्कृतिक गौरव के प्रतीक है तथा जो सुनहले अतीत की स्मृति को ताजा कर देते है।

शाकम्भरी प्रदेश इतिहास के पृष्ठो मे—

राजस्थान मे शाकम्भरी प्रदेश का अपना विशिष्ट स्थान है। राजस्थान के मध्य मे होने के कारण शाकम्भरी को राजस्थान का हम हृदय कह सकते है। शाकम्भरी ही आजकल का साम्भर प्रदेश है। इस प्रदेश का हजारो वर्षो का अपना इतिहास है जिसने देश के सर्वांगीण विकास मे महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। संस्कृत एव अपभ्रंश मे यह प्रदेश शाकम्भरी प्रदेश के नाम से जाना जाता रहा। महाकवि वीर ने अपने अपभ्रंश काव्य जम्बूस्वामीचरित मे (सन् १०१९) शाकम्भरी प्रदेश का उल्लेख किया है।[1] इसी तरह आचार्य जिनसेन ने अपने काव्य आदिपुराण मे भी इस प्रदेश का नाम लिया है। लेकिन इसकी सीमाएँ सर्वदा एकसी नही रही। यहा से प्राप्त उपकरणो से अनुमानित है कि यह क्षेत्र ईसा की तीसरी शताब्दी पूर्व से दसवी ईस्वी तक बडा ऐतिहासिक महत्त्व का रहा है। यहाँ के उत्खनन से प्राप्त मिट्टी, लोहे, सोने-चादी, ताँबा, सीप आदि के उपकरण इस प्रदेश की स्थिति पर नवीन प्रकाश डालते हैं।[2]

चौहान राजाओ के प्रारम्भिक शासन काल मे सांभर उनके राज्य के राजधानी होने के कारण यह सारा प्रदेश शाकम्भरी प्रदेश कहा जाने लगा था। इनके राज्य की सीमाएँ एक ओर अजमेर तो दूसरी ओर रणथम्भौर दुर्ग तक चली गई थी। और इस सारे प्रदेश को सपादलक्ष प्रदेश के नाम से जाना जाता था। साभर झील के कारण भी इस नगर का महत्त्व बढ गया और यह व्यापार का केन्द्र माना जाने

---

१ 'जम्बूसामि चरिउ' डा० विमलप्रकाश जैन–पृष्ठ संख्या ३
२ 'राजस्थान के इतिहास के स्रोत' डा गोपीनाथ शर्मा–पृष्ठ संख्या १९

लगा था। चौहान काल में सम्राट् पृथ्वीराज (प्रथम) प्रसिद्ध शासक माना जाता था। वह जैनधर्म का अत्यधिक प्रेमी था और रणथम्भौर के जैन मन्दिरों में उसने स्वर्ण कलश चढाया था। पृथ्वीराज के पश्चात् उसका पुत्र अजयराज शाकम्भरी के सिंहासन पर बैठा। उसने अजमेर नगर बसाया और अपनी राजधानी को यहां हस्तान्तरित कर ली। लेकिन इससे इस प्रदेश की महत्ता में कभी कमी नहीं आई।

शाकम्भरी नगर देवयानी और शर्मिष्ठा कुण्डो के कारण प्रसिद्ध रहा है। कहते है देवयानी ययाति राजा की रानी थी और राजकुमारी शर्मिष्ठा द्वारा इसे तालाब मे फिकवा दिया गया था। साभर से १८–१६ किलोमीटर शाकम्भरी का प्राचीन मन्दिर है इसी शाकम्भरी मन्दिर के पास ७वी शताब्दी मे चौहान राजा वासुदेव ने जो नगर बसाया था वह भी शाकम्भरी के नाम से प्रसिद्ध हो गया और यह सारा प्रदेश ही शाकम्भरी प्रदेश के रूप मे माना जाने लगा।

सन् ११६३ मे मुहम्मद गौरी द्वारा पृथ्वीराज तृतीय की पराजय के पश्चात् साभर प्रदेश विभिन्न शासकों के अधिकार मे जाता रहा। सन् १२१५ मे यह प्रदेश रणथम्भोर दुर्ग के अधीन आ गया और सन् १२२६ मे बादशाह उल्तुतमिश ने जब रणथम्भोर पर विजय प्राप्त की तो साभर क्षेत्र भी उनके अधिकार मे चला गया। हम्मीर महाकाव्य मे हम्मीर का शाकम्भरी देश के शासक के रूप मे उल्लेख आता है। सन् १३६३ के एक शिलालेख के आधार पर यह प्रदेश उस समय देहली के सुल्तान फिरोजशाह के अधीन था। सन् १४०० के बाद नागौर मे एक सल्तनत स्थापित हुई। यह गुजरात के राजवंश से सम्बन्धित था।[1] यहां का पहला सुल्तान फिरोजखान था।[2] इसका पहला लेख १४१८ ए० डी० का है।[3] उसके समय मेवाड के महाराणा मोकल ने सपादलक्ष पर आक्रमण करके डीडवाना तक का भाग जीत लिया था।

मोकल के लौटने पर शम्सखां के पुत्र मुजाहिद खा ने वापस इस प्रदेश पर अधिकार कर लिया। नरेणा के गौरीशकर तालाब की मस्जिद के लेख हि० स० ८४० (१४४० ई०) के अवलोकन से स्पष्ट है कि इस तालाब का नाम उसने 'मुस्तफसर' रखा था[1] कुछ समय बाद महाराणा कुम्भा ने आक्रमण करके नरेणा, नागौर आदि जीता। इस प्रदेश पर उसके चार बार आक्रमण हुए। एक बार नागौर नगर

1 Epigraphica Indo mus limioca 1923-24 P P 26

२ (बेले हिस्ट्री आफ गुजरात पृ० ६८)

३ एनुअल रिपोर्ट आफ इण्डियन एपिग्राफी ६६५-६६ न० डी ८४२

को पूर्ण रूप से नष्ट कर दिया किन्तु उसने अपने राज्य मे नही मिलाया। अकवर के अधिकार करने के पूर्व तक इस राजवश का यहा अधिकार बना रहा।

वादशाह अकवर के शासनकाल मे साभर प्रदेश का शासन स्थिर रहा और इस क्षेत्र का विकास भी पर्याप्त हुआ। उस समय यह इलाका अजमेर सरकार के अधीन था। सन् १५६२ मे आमेर के शासक राजा भारमल की पुत्री का अकवर के साथ विवाह भी साभर नगर मे सम्पन्न हुआ था और इसी उपलक्ष मे एक मस्जिद एव एक कुण्ड का निर्माण कराया गया था। अकबर के पश्चात् जब जहागीर वादशाह वना तो वह भी साँभर मे कितनी ही वार आया था। उसने शाकम्भरी मन्दिर के पास ही एक गुम्वज वनवाई और यहा एक कुण्ड भी वनवाया। वि० स० १६६१ के अकवरी सराय साभर के लेख मे साभर के तत्कालीन शासक भारमल के वशज नरहरि का नाम आता है। नरेणा वि० स० १६७० से १७५० तक खागारोत कछावा के अधिकार मे था। उस समय नारायणदास, भोजराज आदि उल्लेखनीय शासक हुए। साभर से सन् १६६५ ई० के लेख मे औरगजेव के समय मे यहा के शासक मोहम्मद का नाम है। जोवनेर खगार जगमाल को मिला। एक किंवदन्ती के अनुसार औरगजेव साभर मे आकर शाकभरी देवी की मूर्ति को तोडने का आदेश दिया तो मधुमक्खियो ने उसको एव उसकी सेना को बुरी तरह घायल कर दिया अन्त मे लाचार होकर औरगजेव को शाकम्भरी देवी से क्षमा मागनी पडी और उसके स्थान पर देवी की दूसरी मूर्ति स्थापित की गई।

मुगल साम्राज्य के कमजोर होने के पश्चात साभर प्रदेश के सैयद गवर्नर ने देहली के वादशाह को आय देना वन्द कर दिया। ३ अक्टूवर सन् १७०८ को सैयदो व जयपुर मेवाड जोधपुर की सम्मिलित सेना के बीच जोरदार युद्ध हुआ। इस युद्ध मे महाराजा सवाई जयसिंह जी जयपुर महाराजा अजीतसिंह जी जोधपुर, राठोड वीर दुर्गादास तथा उणियारा के नरूका राव सगामसिंह ने भाग लिया था व मुगल सेना के छक्के छुडा दिये थे। इसके पश्चात् साभर का इलाका मुगल सम्राट् की ओर से उदयसिंह को मिल गया। कहते हे उदयसिंह सैयद गवर्नर का सहायक था। अपनी चतुरता के कारण यह जयपुर के महाराणा माधोसिंह के विशेष प्रतिनिधि राव कृपाराम की सहायता से मुगल सम्राट् तक पहुच गया था। उसने सम्राट् से साभर लेक की दुगनी आय करने का वायदा कर लिया। कुछ ही समय पश्चात् सम्राट् की ओर से उसे राजा की उपाधि से सम्मानित किया गया और २०० घुडसवारो के स्थान पर ६०० घुडसवार रखने का आदेश दे दिया। उदयसिंह ने शीघ्र ही जोवनेर, खण्डेला, खरखरडी एव नागौर पर भी शासन स्थापित कर लिया। साभर का फिर

प्रभुत्व वढने लगा। लेकिन साभर के दोनो ओर जयपुर और जोधपुर स्टेट्स पडती थी। दोनो ही राजा शक्ति सम्पन्न हो रहे थे। इसलिये जोधपुर के महाराजा अभयसिंह एव जयपुर के महाराजा ईश्वरीसिंह ने एक वडी फौज लेकर साभर पर चढाई कर दी। लेकिन शीघ्र ही कोई निर्णायक स्थिति पैदा नही होने के कारण उदयसिंह के पास सधि प्रस्ताव भेजा गया। उदयसिंह ने उसे स्वीकार कर लिया और अपने दीवान हरगोविंद के साथ जयपुर महाराजा से मिलने चला गया। लेकिन उसे दोनो ही फौजो ने पकड लिया। अन्त मे उसे जयपुर लाया गया और जब उसने दोनो राजाओ के इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया कि वह उनके अधीन रह कर साभर का शासन चलायेगा उसे मुक्त नही किया गया और अन्त मे वह सन् १७७९ मे मार डाला गया। इस प्रकार साभर दोनो राज्यो के अधीन चला गया। जयपुर जोधपुर के राजाओ ने साभर एव उसके ४० गावो पर कब्जा कर लिया इनमे से २८ गाव तो एक दूसरे ने वाट लिये और शेष साभर के नीचे ही चलाते रहे। राजस्थान निर्माण के पूर्व तक यहा का शासन जयपुर जोधपुर की ओर से वारी वारी से होता रहा।[1]

इस प्रकार शाकम्भरी प्रदेश ने सैकडो हजारो वर्षो मे कभी अपना स्वर्णयुग देखा तो कभी उसने भयावह स्थिति का भी सामना किया। शासन वदलते गये। एक के पश्चात् दूसरे राजा, महाराजा, नवाव वनते गये लेकिन साभर प्रदेश मे धार्मिक, साहित्यिक एव सास्कृतिक विकास का क्रम कभी तीव्र और कभी मन्द गति से चलता रहा। जैन धर्म एव सस्कृति की दृष्टि से साभर प्रदेश महत्त्वपूर्ण प्रदेश माना गया और इसमे साभर, जोवनेर, नागौर, नरायणा एव अजमेर जैसे प्रसिद्ध नगरो मे जैनाचार्यो एव सन्तो के विहार होते रहे और जनता द्वारा इनका स्वागत होता रहा। अपभ्र श, सस्कृत, हिन्दी ग्रन्थो का इन सन्तो द्वारा निर्माण होता रहा और इस प्रकार जन मानस को आध्यात्मिक एव सास्कृतिक खुराक मिलती रही। समय-समय पर इस क्षेत्र मे प्रतिष्ठाओ का आयोजन एव मन्दिरो का निर्माण भी होता रहा तथा नरायणा नागौर एव अजमेर जैसे स्थान महत्त्वपूर्ण स्थान माने जाते रहे।

---

१ देखिये 'राजस्थान के प्राचीन नगर' डा० के० सी० जैन—पृष्ठ स० २५०-५६

प्रथम अध्याय

शाकम्भरी प्रदेश राजस्थान का व्यापारिक प्रदेश होने की दृष्टि से वह सभी धर्मों का और विशेषत जैनो का प्रमुख केन्द्र रहा। भगवान महावीर के पूर्व और उनके पश्चात् यह प्रदेश श्रमण सस्कृति का विशिष्ट प्रदेश माना जाता रहा। इस प्रदेश के नरायणा एव अजमेर जैसे नगर जैन धर्म एव उसकी सस्कृति के प्राचीनतम केन्द्र के रूप मे प्रतिष्ठित रहे। विद्युच्चर ने अपने देश भ्रमण मे शाकम्भरी और अजमेर की यात्रा की थी। जिसका उल्लेख जम्बूसामिचरिउ मे हुआ है। इसी तरह सकलतीर्थ स्तोत्र मे शाकम्भरी प्रदेश के नरायणा, नागौर, साभर की तीर्थों के रूप मे वन्दना की है। धर्मसूरिस्तवन मे साभर का 'सायभरि नरवइ नयचलणु' के रूप मे उल्लेख किया है। नरायणा के एक खेत मे से जो जैन प्रतिमाए उपलब्ध हुई हैं उनसे भी यह प्रदेश हजारो वर्षों से जैन धर्म का केन्द्र रहा ऐसा पतीत होता है। अजमेर नगर की स्थापना के पूर्व भी वहा जैन वस्ती थी और उसी के वाद मे नगर के रूप मे इसकी स्थापना हुई थी। गत २५०० वर्षों से शाकम्भरी प्रदेश के सभी तरह के शासन देखे है जिसके कारण कभी इस प्रदेश मे जैन सस्कृति को पल्लवित होने के पर्याप्त अवसर मिले और कभी औरगजेव जैसे अत्याचारी शासन मे यहा खूब खून खरावी हुई और प्रदेश की सस्कृति को तहस-नहस करने मे सवसे अधिक रुचि ली गयी।

चौहान शासको ने जब साभर को अपनी राजधानी वनायी तो उनके राज्य मे अजमेर, रणथम्भोर जैसे विश्वविख्यात दुर्ग थे। ८वी शताब्दि मे ही चौहानो ने शाकम्भरी मे अपना शासन स्थापित कर लिया था। इस देश मे अनेक राजा हुए जिनमे पृथ्वीराज प्रथम व द्वितीय जैन धर्म के महान् प्रशसक एव भक्त थे। प्रथम पृथ्वीराज ने रणथम्भोर के दिगम्बर जैन मन्दिर मे स्वर्णकलश चढाया था। तथा द्वितीय पृथ्वीराज ने एक जैन मन्दिर के लिये एक ग्राम का दान किया था। वह

---

१ जम्बूसामिचरिउ – पृ० सं० १६०

२ खडिल डिडूआणय नराण हरमउर खट्टउदेसे। नागउर मुन्विदतिसु सभन्दिसमि वदेमि ॥२४॥

विजोलिया पार्श्वनाथ तीर्थ के जैन साधुओ का भक्त था। अजमेर नाडोल, दिल्ली एवं अन्य स्थानो के तत्कालीन चौहान शासक जैन धर्म के अनुयायी नही होते हुए भी इस धर्म के प्रति उनकी गहरी आस्था थी। उन्होने अपने राज्य मे पशुहिंसा पर प्रतिवन्ध लगा दिया था। अन्हलदेव भगवान महावीर का भक्त था और सन् ११६२ मे महावीर स्वामी के मन्दिर का निर्माण करवाया था। तथा अपने राज्य मे साधुओ एव साध्वियो तथा श्रावक श्राविकाओ के लिए उत्तम व्यवस्था की थी। मारोठ एव नागौर मे भट्टारको की गादिया स्थापित होना, उनका वहाँ पट्टाभिषेक होना भी इस प्रदेश मे जैन धर्म की लोकप्रियता की ओर स्पष्ट सकेत है। इस सारे ही प्रदेश मे जैनधर्म एव सस्कृति का निरन्तर प्रचार प्रसार होता रहा।

भगवान महावीर के निर्वाण के २५०० वर्ष के काल मे इस प्रदेश ने राजस्थान मे जैन धर्म की उल्लेखनीय सेवा की। उनके महान् सिद्धान्त अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य जैसे व्रतो के परिपालन के लिए आवश्यक कदम उठाये गये। खण्डेला नगर मे जब खण्डेलवाल जाति की उत्पत्ति हुई और आचार्य जिनसेन ने ८४ ग्राम के लोगो को जैनधर्म मे दीक्षित किया तो इस प्रदेश के गावो ने भी उस महान धार्मिक यज्ञ मे बहुत योगदान दिया। इस प्रदेश के साखूणिया ग्राम से साखूणी गोत्र वाले श्रावको का निवास माना जाता है। इसलिये आचार्य जिनसेन ने इस प्रदेश मे अवश्य विहार किया होगा यह निश्चित है। मारवाड का साँभर प्रमुख प्रवेश द्वार होने के कारण इस प्रदेश मे जैनाचार्यो का सदा ही विहार होता रहा। इसी तरह ओसवाल जाति के सस्थापक आचार्य रत्नप्रभसूरि (वि० ५वीं शताब्दि) ने भी इस प्रदेश को अपने चरणो से पावन किया था। भगवान महावीर के पश्चात् आचार्य भद्रबाहु, सम्राट् चन्द्रगुप्त के साथ दक्षिण भारत गये थे। यदि उनका मार्ग योगीनीपुर होकर रहा होगा तो सभवत अजमेर होकर उनका विहार हुआ होगा। यद्यपि इसके कोई ऐतिहासिक प्रमाण नही मिलते है लेकिन इसकी सभावना से इन्कार भी नही किया जा सकता। राजस्थान एव मध्यप्रदेश तथा देहली मे जिस जैन सस्कृति के उत्कर्ष के प्रमाण मिलते है उससे यह निश्चित है कि यह पूरा प्रदेश जैनाचार्यो के विहार का प्रमुख स्थान रहा था नही तो राजस्थान मे से खण्डेलवाल, बघेरवाल, ओसवाल, पल्लीवाल जैसे श्रद्धालु जातियो की उत्पत्ति नही होती और आज राजस्थान मे उनका महान स्थान नही होता। आचार्य समन्तभद्र ने यद्यपि शाकम्भरी प्रदेश का अथवा राजस्थान के किसी नगर का नाम नही गिनाया है लेकिन उनके विहार से भी इन्कार नही किया जा सकता क्योकि उन्होने तो सम्पूर्ण भारत मे भगवान महावीर के शासन का प्रचार किया था और अपने विरोधी विद्वानो को चुनौती देकर उन्हे शास्त्रार्थ के लिये ललकारा था।

१२वी शताब्दी के बाद जब भट्टारक परम्परा का युग आया और भट्टारको का समाज मे प्रमुख स्थान माना जाने लगा तो उस परम्परा के विकास मे भी राजस्थान ने सर्वाधिक योग दिया। देहली, चाकसू, टोडारायसिह, आमेर, सागानेर, जयपुर, अजमेर, चित्तौड, डूगरपुर उनके यद्यपि प्रमुख केन्द्र थे और इन्ही नगरो मे उनकी गादिया स्थापित थी, लेकिन उनका विहार सारे राजस्थान मे होता था। शाकम्भरी प्रदेश उनके विहार का प्रमुख केन्द्र था। इन भट्टारको मे पद्मनन्दि, भ० प्रभाचन्द्र, भ शुभचन्द्र, भ जिनचन्द्र, भ सकलकीर्ति, भ ज्ञानभूषण, भ शुभचन्द्र II भ नरेन्द्रकीर्ति भ जगत्कीर्ति, भ सुरेन्द्रकीर्ति आदि के नाम प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हे। इन भट्टारको ने जिनका विस्तृत परिचय आगे दिया गया ह, इस प्रदेश मे भगवान महावीर द्वारा प्रतिपादित धर्म को जन जन मे लोकप्रिय बनाने और अहिसा सँस्कृति का प्रचार करने मे अपना जबरदस्त योग दिया और यही कारण हे यह पूरा प्रदेश दिगम्बर सम्प्रदाय का आज भी गढ माना जाता है। यहा के अजमेर, नागौर, नावा, कुचामन, साभर, जोबनेर, मोजमाबाद, नरायणा जैसे नगर अहिसा एव जैन धर्म के प्रमुख नगर माने जाते थे और आज भी जैन सस्कृति की दृष्टि से राजस्थान मे इनका प्रमुख स्थान माना जाता है।

जैन सास्कृति के प्रमुख नगर

वैसे तो सम्पूर्ण शाकम्भरी प्रदेश ही जैन सस्कृति का प्रमुख केन्द्र रहा हे। यहा अधिकाश गावो एव नगरो मे जैनो की बस्ती हे, जैन मन्दिर है, शास्त्र भण्डार स्थापित है। जैन साधुओ ने प्रदेश के अनेक गावो मे विहार किया हे। राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारो मे जो हस्तलिखित ग्रन्थ है उनकी प्रशस्तियो मे प्रदेश के गावो का पर्याप्त उल्लेख हुआ है तथा वहा के रहने वाले श्रावको एव श्राविकाओ ने पाण्डुलिपियो को लिखवा कर सद्साहित्य के प्रचार प्रसार मे अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है इन गावो की यदि सूची तैयार की जावे तो काफी बडी होगी। और उनके साहित्यिक एव सास्कृतिक मूल्याकन मे कितने ही तथ्य सामने आवेगे। ऐसे ग्रामो एव नगरो मे नागौर, किशनगढ, कुचामन, जोबनेर, डीडवाना, भादवा, भैसलाना, मारोठ (महाराष्ट्र), मेडता, रणथम्भोर, साभर, सासूण, मोजमाबाद, नरायणा, रेनवाल, दूदू आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हे। यहा इनमे से कुछ नगरो का जैनधर्म, साहित्य एव पुरातत्त्व की दृष्टि से परिचय उपस्थित किया जा रहा है—

१. नागौर

वर्तमान मे नागौर राजस्थान का एक प्रान्त हे और नागौर ही इसका प्रमुख नगर है। राजस्थान निर्माण के पूर्व यह नगर जोधपुर राज्य मे था और उसका प्रमुख

नगर माना जाता था। यह नगर इस प्रदेश का सैकडो वर्षो मे प्रमुख नगर माना जाता रहा है। यह विभिन्न नामो से इतिहास मे प्रसिद्व रहा इनमे नागपुर, नागौर, नागपत्तन, अहिपुर, भुजगनगर नाम उल्लेखनीय हैं। डा० शर्मा के अनुसार अहिच्छत्रपुर नागौर का ही दूसरा नाम था जो साभर के समीप ही स्थित था। किसी समय यह नगर जागलदेश की राजधानी रहा था। ७वी शताब्दि मे ही यह चौहानो के शासन मे आ गया और सपादलक्ष प्रदेश के अन्तर्गत जाना जाने लगा। कुछ समय तक नागौर गुजरात के चालुक्यो के शासन मे भी रहा लेकिन चौहानो ने फिर उनसे छीन लिया। मुस्लिम शासन मे यह अधिकाश समय तक उनके अधीन रहा। सैनिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण स्थान होने के कारण इस पर वार वार आक्रमण होते रहे और इस पर एक के पश्चात् दूसरा शासक शासन करता रहा। १८वी शताब्दि के अन्त मे यह जोधपुर राज्य का अग बन गया।

सैकडो वर्षो तक मुसलिम शासन मे रहने के कारण धर्मान्ध शासको ने यहा के हिन्दू एव जैन मन्दिरो को खूब ध्वस्त किया। मन्दिरो को मस्जिदो मे परिवर्तित किया गया। फिर भी नागौर जैन सस्कृति का प्रमुख नगर माना जाता रहा। १२वी शताब्दि मे होने वाले सिद्धसेनसूरि ने इसका प्रमुख तीर्थ के रूप मे उल्लेख किया है। गुजरात के प्रमुख श्वेताम्बर जैनाचार्य हेमचन्द्रसूरि का यही पट्टाभिषेक हुआ था और इस अवसर पर धनद नामक जैन श्रेष्ठी ने अपनी अपार सम्पत्ति का उपयोग किया था। श्रावको के आग्रह से ही खरतरगच्छ के आचार्य जिनदत्तसूरि एव जिनवल्लभ-सूरि ने इस नगर मे विहार किया था। १३वी शताब्दि मे पेथडशाह ने यहा एक जिन मन्दिर का निर्माण कराया था। तपागच्छ की एक शाखा नागपुरीय का उद्गम भी इसी नगर से माना जाता है। १५वी एव १६वी शताब्दि मे श्वेताम्बर मूर्तियो की नगर मे काफी प्रतिष्ठाए हुई। उपदेशगच्छ के कक्कसूरि द्वारा यहा शीतलनाथ के मन्दिर की प्रतिष्ठा कराई गई थी।

दिगम्बर जैन समाज का तो नागौर आरम्भ से ही प्रधान केन्द्र रहा। जोधपुर स्टेट मे पहले नागौर मे ही दिगम्बरो की सबसे अधिक जनसख्या थी। भट्टारक जिनचन्द्र के शिष्य रत्नकीर्ति ने यहा स्वतन्त्र रूप से भट्टारक गादी की स्थापना की।[1] सम्वत् १५८१ श्रावण शुक्ला पचमी को इसी नगर मे इनका पट्टाभिषेक हुआ। भ० रत्नकीर्ति के पश्चात् यहा एक के पश्चात् दूसरे भट्टारक होते रहे। इन भट्टारको के कारण ही साभर क्षेत्र मे जैन धर्म एव साहित्य का अच्छा प्रचार प्रसार

---

१ भट्टारक पट्टावली – महावीर भवन जयपुर के सग्रह मे।

होता रहा। नागौर का ग्रन्थ संग्रहालय सारे राजस्थान में विशाल एवं समृद्ध है। पाण्डुलिपियों का ऐसा विशाल संग्रह राजस्थान में अन्यत्र कहीं नहीं मिलता। १५-१६वीं में यहां संस्कृत कवि मेधावी हुआ जिसने संवत् १५४१ में इसी नगर में धर्मसंग्रहश्रावकाचार[1] की रचना की थी। कवि ने अपने ग्रन्थ में नागौर नगर का निम्न प्रकार उल्लेख किया है—

> सपादलक्षे विषयेति सुन्दरे श्रियापुरे नागपुर नमस्ति तत्।
> पेरोजराना नृपति प्रयाति न्यायेन शौर्येण रिपून् निहन्तिच ॥
> नन्दति यस्मिन् धनधान्यसम्पदा लोका स्वमतानगरोन धर्म्मंत।
> जैनाधनाचैत्यगृहेषु पूजन सत्पात्रदान विधत्यनारत ॥

नागौर में भट्टारक भानुकीर्ति का संवत् १६९० तथा भट्टारक श्रीभूषण का संवत् १७०५ में पट्टाभिषेक हुआ था।[2] ये दोनों ही नागौर गादी के भट्टारक थे।

इस नगर में ग्रन्थ लेखन का कार्य पूरे वेग से होता था। राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों में सैंकड़ों ऐसे ग्रन्थ हैं जिनकी पाण्डुलिपि नागौर में हुई थी। संवत् १४८३ में सामयिक पाठ की प्रतिलिपि यहां जयानन्द गणि ने की थी।[3] संवत् १६२२ में यहां अपभ्रंश कृति षट्कर्मोपदेशरत्नमाला की प्रतिलिपि की गई थी।[4] जयपुर के पाटोदी के मन्दिर के शास्त्र भण्डार में एक प्रतिज्ञा पत्र है जो एक बहिन को जब नागौर में दीक्षा दी गई थी तब उसने उसे भरा था। इससे पता चलता है कि उस समय दीक्षा देते समय प्रतिज्ञापत्र भरवाया करते थे। संवत् १६७० में ऊदा श्रावक की भार्या ऊदलदे ने द्रव्यसंग्रह की पाण्डुलिपि करवा कर पल्यव्रतोद्यापन पर भेंट की थी।[5] संवत् १६७४ वैसाख सुदी पूर्णिमा के दिन यहीं पर धर्मचक्रयन्त्र को लिखवाया गया था। इसी तरह पं० उदयसिंह ने संवत् १६९४ में यहां ग्रन्थों की प्रतिलिपि की थी।[6] जयपुर के विद्वान् नेमिचन्द्र पाटनी जिन्होंने संवत् १८८० में चतुर्विंशति तीर्थंकर पूजा को निबद्ध किया था, कुछ समय के लिये नागौर जाकर रहने

---

१. राजस्थान के जैन ग्रन्थ भण्डारों की ग्रन्थ सूची भाग प्रथम।
२. भट्टारक सम्प्रदाय – पृष्ठ संख्या ११७
३. ग्रन्थ सूची पंचम भाग – पृष्ठ संख्या २४१
४ ग्रन्थ सूची चतुर्थ भाग – पृष्ठ संख्या ८८
५ ग्रन्थ सूची चतुर्थ भाग – पृष्ठ संख्या ७६२
६. ग्रन्थ सूची चतुर्थ भाग – पृष्ठ संख्या ३५

लगे थे ।[1] भ० हेमकीर्ति के शिष्य क्षेमेन्द्रकीर्ति ने नागौर मे ही "गजपथ मडल पूजन विधान" की रचना समाप्त की थी ।[2] सवत् १८३१ मे नागौर गादी के भट्टारक जयकीर्ति के शिष्य आचार्य देवेन्द्रकीर्ति के समय मे ब्रह्म जिनदास के 'आदिपुराणरास' की प्रतिलिपि की गई थी ।[3] इस तरह सैकडो ग्रन्थो की नागौर मे प्रतिलिपि का कार्य सम्पन्न हुआ जो राजस्थान के विभिन्न ग्रन्थ भण्डारो मे सग्रहीत हे । सवत् १८२४ मे यहा पुराणसार सग्रह की प्रतिलिपि की गई थी तथा सवत् १७७७ मे यहा आचार्य नेमिचन्द्र "कृत कर्मप्रकृति ग्रन्थ" की प्रतिलिपि सम्पन्न हुई थी ।

अकबर के शासनकाल मे नागौर मे अपेक्षाकृत शान्ति रहने से यहा भट्टारको तथा श्वेताम्बर साधुओ का खूब विहार होता रहा । सन् १५८७ मे हीरविजयसूरि ने इसी नगर मे चतुर्मास किया था ।

२. शाकम्भरी

वर्तमान साभर का नाम ही शाकम्भरी रहा है । शाकम्भरी का उल्लेख सस्कृत, प्राकृत एव अपभ्र श के विभिन्न ग्रन्थो मे मिलता है । शाकम्भरी देवी के पीठ के रूप मे वर्तमान साभर की प्राचीनता महाभारत काल तक तो चली ही जाती है । महाभारत (वनपर्व) देवी भागवती ७।२८, शिवपुराण (उमासहिता) मार्कण्डेयपुराण और मूर्त्ति रहस्य आदि पौराणिक ग्रन्थो मे, शाकम्भरी की अवतार कथाओ मे शतवार्पिकी अनावृष्टि, चिन्ताकुल ऋपियो पर देवी का अनुग्रह, जलवृष्टि, शाकादि प्रसाद दान द्वारा धरणी के भरण पोपण आदि की कथाए उल्लेखनीय है ।[5]

ची चतुर्थ भाग – पृष्ठ सख्या ४७३

२. हेमकीर्तिमुने पट्टे क्षेमेन्द्रादि यश. प्रभु. ।
तस्याज्ञया विरचित गजपथ सुपूजन । ग्रन्थ-सूची चतुर्थ भाग–पृष्ठ सख्या ४६८

३ ग्रन्थ-सूची चतुर्थ भाग – पृष्ठ सख्या ६३१

४ ततोऽहमखिल लोकमात्मदेहसमुद्भवै ।
भरिष्यामि सुरा शाके आवृष्टे प्राणधारकै ।।
शाकम्भरीति विख्याति तदा यास्याम्ह भूवि । दुर्गा सप्तशती ११।४८९

५ स्वादूनि फलमूलानि भक्षणार्थं ददौ शिवा ।
शाकम्भरीति नामापि तद्दिनात् समभून्नृप ।। देवी भागवती ७।२८
आतिथ्य च कृत तेषा, शाकेन किल भारत ।
तत शाकम्भरीत्येव नामा यस्या प्रतिष्ठितम् । महाभारत वनपर्व ८४

वैष्णव पुराणों में शाकम्भरी देवी के तीनों रूपों में शताक्षी, शाकम्भरी और दुर्गा का विवेचन मिलता है। देश में शाकम्भरी के तीन साधना पीठ हैं। पहला सहारनपुर में दूसरा सीकर के पास एवं तीसरा साभर में स्थित है। यों तो साभर को शाकम्भरी का प्रसिद्ध साधना पीठ होने का गौरव प्राप्त है लेकिन उसमें स्थित प्रसिद्ध तीर्थस्थली देवदानी (देवयानी) के आधार पर भी इस नगर की परम्परा महाभारत काल तक चली जाती है।

जैनधर्म और जैन संस्कृति की दृष्टि से शाकम्भरी प्रारम्भ से ही महत्त्वपूर्ण नगर रहा। मारवाड प्रदेश का प्रवेश द्वार होने के कारण भी इस नगर का अत्यधिक महत्त्व रहा। देहली से एवं आगरा से आने वाले जैनाचार्य शाकम्भरी में होकर ही मारवाड में विहार करते थे। अजमेर, चित्तौड, चाकसू, नागौर एवं आमेर में होने वाले भट्टारकों ने साभर को अपने विहार से खूब पावन किया था। महाकवि वीर, आशाधर, धनपाल एवं महेश्वरसूरि ने अपनी कृतियों में शाकम्भरी का बडी श्रद्धा के साथ उल्लेख किया है। हिन्दी के प्रसिद्ध जैन कवि ब्रह्म रायमल्ल ने साभर में बैठकर ग्रन्थ रचना की थी। नरायना से जो प्राचीन प्रतिमाए उपलब्ध हुई है ये इस प्रदेश एवं उसकी राजधानी साभर में जैन संस्कृति की विशालता पर प्रकाश डालती हैं। सवत् १५२४ मे यहा जिनचन्द्राचार्य कृत सिद्धान्तसार सग्रह की प्रतिलिपि की गयी।[1] सवत् १७५० मे यहा भट्टारक रत्नकीर्ति साभर पधारे और श्राविका गोगलदे ने सूक्तिमुक्तावली टीका की पाण्डुलिपि लिखवा कर उन्हे भेट की थी।[2] सवत् १८२६ मे अजमेर के भट्टारक विजयकीर्ति की आम्नाय के हरिनारायण ने पुराणसार की प्रति करवा कर प० माणकचन्द को भेट मे दी थी। १९वी शताब्दी मे यहा श्री रामलाल पहाड्या हुए जो अपने समय के अच्छे लिपिकार थे।[3]

१४वी शताब्दि मे साभर मे एक विशाल मन्दिर का निर्माण करवाया। नगर मे ४ दिगम्बर जैन मन्दिर है जिनमे विशाल एव प्राचीन जिन प्रतिमाए विराजमान है। नगर के धान मण्डी के मन्दिर को जो प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थो का सग्रह है वह यहा के निवासियो की साहित्यिक रुचि की ओर सकेत करने वाला

---

१ राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारो की ग्रन्थ सूची पचम भाग पृष्ठ ८३
२ ,, ,, पृ०स० ७०९
३. ,, ,, पृ०स० २९०

है। नगर मे इस युग मे भी जैनो की अच्छी बस्ती है और वे अपने आचार व्यवहार तथा शिक्षा आदि की दृष्टि से प्रदेश मे प्रमुख माने जाते हैं।

३. अजमेर

राजस्थान के मध्य मे स्थित होने तथा प्राकृतिक साधनो से रक्षित होने के कारण अजमेर अपने जन्म से ही देश के सर्वोच्च शासको का आकर्षण का केन्द्र रहा। यह नगर पृथ्वीपुर[१], अजयमेरु[२], अजयदुर्ग,[३] अजयगढ[४], एव अजयनगर[५], अजीर्णगढ[६] जैसे विभिन्न नामो से प्रसिद्ध रहा। सर्व प्रथम यह नगर शाकम्भरी प्रदेश के अधीन रहा लेकिन कुछ ही समय पश्चात् उसे उसकी राजधानी बनने का सौभाग्य प्राप्त हो गया। इसके पश्चात् अजमेर को सभी शासको ने प्रमुखता दी और इस पर अधिकार रखने का पूर्ण प्रयास किया। राजपूतो, मुसलिम शासको मराठो एव अग्रेजो ने अजमेर पर समय-समय पर शासन किया और राजस्थान मे सबसे अधिक इसी नगर को प्रधानता मिली।

इतिहास विशारदो के अनुसार पृथ्वीराज चौहान का पुत्र अजयपाल ने १२ वी शताब्दी मे सभवत इसकी व्यवस्थित नगर के रूप मे स्थापना की थी। लेकिन अजमेर मे इसके पूर्व किलो के रूप मे एक अच्छी बस्ती अवश्य थी और अजयपाल ने इसे अपने पिता के नाम से इसका पुन नामकरण किया होगा ऐसा सभव है। चौहानो के शासन मे अजमेर उत्तरी भारत का प्रमुख नगर माना जाता रहा। चौहानो के शासन के पश्चात् अजमेर कभी राजपूत शासको एव कभी मुसलिम शासको के अधीन रहा। अकबर के शासन काल मे इस नगर को और भी महत्त्व दिया और स्वय बादशाह अकबर यहा अपने जीवन मे कितनी ही बार आया था। मुगलो के पतन के पश्चात् कुछ समय तक यह नगर ग्वालियर के मराहठा शासक सिंधिया के अधीन रहा और अन्त मे सन् १८१८ मे अग्रेजी शासन का एक अग बन गया और जब राष्ट्र स्वतन्त्र हुआ तो अजमेर को राजस्थान शासन मे एक जिले का रूप दिया।

---

१ राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारो की ग्रन्थ सूची पचम भाग
२ " " "
३ " " पृ०स० ११८९
४ " " पृ०स० ११८
५ " " पृ०स० ४७८
६ " " पृ०स० ७१६

राजनैतिक गतिविधियो के अतिरिक्त यह नगर जैन, वैष्णव एव मुसलिम सभी सस्कृतियो का केन्द्र रहा। जैसलमेर के शास्त्र भडारो मे उपदेश टीका की एक पाण्डुलिपि है जो सवत् १२१२ चैत्र सुदी १३ की है तथा जिसकी प्रति इसी नगर मे सम्पन्न हुई थी।[1] उस समय अजमेर विग्रहदेव के शासन की राजधानी था। अजमेर जैनाचार्यों, भट्टारको, साधुओ एव साध्वियो का प्रमुख केन्द्र रहा। महाराजा अर्णोज (११३२ ए डी) के समय मे यहा जिनदत्तसूरि का आगमन हुआ।[2] उनका यही स्वर्गवास हुआ और इनकी स्मृति मे दादाबाडी का निर्माण कराया गया। सवत् ११७८ मे यहा जिनपतिसूरि ने अपना चतुर्मास किया था।[3]

१३वी शताब्दी मे यह नगर मूलसघ के भट्टारको का केन्द्र बन गया। जिनमे वसन्तकीर्ति, प्रभाचन्द्रकीर्ति, शान्तिकीर्ति, धर्मचन्द्र एव रत्नकीर्ति–II के नाम उल्लेखनीय है। भ० धर्मचन्द्र (स० १२७१) तथा भ० रत्नकीर्ति (स० १२९६) दोनो ही अजमेर के निवासी थे और उनका अजमेर मे पट्टाभिषेक हुआ था।[4] देहली के सभी भट्टारको का यहा खूब आगमन होता रहा। बादशाह फिरोजशाह तुगलक को अपनी विद्याओ से चमत्कृत करने वाले भ० प्रभाचन्द्र अजमेर गादी के ही भट्टारक थे।[5] सवत् १७४८ मे भ० रत्नकीर्ति–II ने अजमेर मे पुन नागौर गादी की शाखा के रूप मे भट्टारक गादी की स्थापना की जो मडलाचार्य एव भट्टारक दोनो ही नामो से सम्बोधित किये जाते रहे। सवत् १८५२ मे नगर मे महाराव दौलतराव सिंधिया के शासनकाल मे एक विशाल पचकल्याणक प्रतिष्ठा का आयोजन हुआ। प्रतिष्ठा कारक थे धर्मदास गगवाल जो भ० भुवनकीर्ति के प्रमुख शिष्य थे। इस प्रतिष्ठा समारोह मे सैकडो मूर्त्तिया प्रतिष्ठापित हुई थी। जयपुर के बडे दीवान जी के मन्दिर मे जो विशाल आदिनाथ एव महावीर स्वामी की प्रतिमाए है वे इसी प्रतिष्ठा समारोह मे प्रतिष्ठित हुई थी।

अजमेर का अढाई दिन का झोपडा इतिहासकारो के अनुसार एक जैन शिक्षण सस्थान था। टॉड एव फर्गुसन के अनुसार अजमेर का यह पहला मन्दिर था जिसे मुस्लिम शासन मे मस्जिद मे परिवर्तित कर दिया गया था। इसी तरह और भी

---

१ Jain Granth Bhandar in Rajasthan of K C Kasliwal Page 913

२, खरतरगच्छ बृहद् गुर्वावली पृ स १६

३ ,, ,, पृ स २५

४ भट्टारक पट्टावली – महावीर भवन, जयपुर

५. बुद्धिविलास – बखतराम साह – पृ स

मन्दिरो को इस शासन मे ध्वस्त करके मस्जिदो मे परिवर्तित कर दिया गया था। अजमेर के मन्दिर प्राचीन एव विशाल है तथा जिनमे प्रतिष्ठित मूर्तियो पर अकित लेख इतिहास के कितने ही नवीन तथ्यो को उद्घाटित करने वाले है। नगर मे सेठजी की विशाल नशियाँ अजमेर मे आने वाले यात्रियो के लिए आकर्षण का केन्द्र है। इसमे निर्मित तीन लोक की रचना को देखकर सभी यात्री मुग्ध हो जाते है। नगर के बाहर बनी हुई भट्टारको की छत्रिया एव चबूतरे इतिहास के नये पृष्ठ खोलने वाले है और यहा के जैन सन्तो के जीवन पर प्रकाश डालते है।

अजमेर के बडे धडे के मन्दिर मे जो भट्टारकीय शास्त्र भण्डार है[1] वह तो अपने ढग का देश भर मे अकेला भण्डार है। भट्टारको ने साहित्यिक निधियो का जिस प्रकार सरक्षण एव सग्रह किया था वह देखने योग्य है। देश की सभी भाषाओ एव सभी विषयो पर जहा दस बीस नही पचासो ग्रन्थ मिलते हैं। अपभ्र श एव हिन्दी का जितना विशाल साहित्य इस भण्डार मे मिलता है वैसा नागौर को छोड कर राजस्थान के किसी एक भण्डार मे नही मिलता। ऐसी सैकडो पाण्डुलिपिया है जो अजमेर मे ही लिखी गई थी और जो भाषा एव साहित्य की दृष्टि से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है।

सवत् १६१७ वैशाख शुक्ला ३ के शुभ दिन भट्टारक ललितकीर्ति जी का पट्टाभिषेक हुआ था। इस समारोह को देखने के लिये सारे राजस्थान के श्रावक ही नही किन्तु विभिन्न नगरो मे पडितगण भी सम्मिलित हुए थे। जोवनेर मे आये हुए पडित हीरालालजी, जयचन्दजी एव पन्नालालजी, दौलतराम लोढा ओसवाल के भवन मे उतरे थे तथा उसी भवन मे अन्य आठ गावो के पडित भी उतरे थे। वे सभी वहा वैशाख शुक्ला ११ तक रहे थे।[2]

सवत् १६२३ मे अजमेर नगर मे छीतर काला हिन्दी के अच्छे विद्वान् हुए थे। उन्होने इन्दौर मे जाकर सन् १६२४ मे 'जिनप्रतिमास्वरूप वर्णन' हिन्दी कृति

---

१ राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारो की ग्रन्थ-सूची पचम भाग

२ लिखित प० पन्नालाल अजमेर नगर मे भट्टारक जी महाराज श्री १०८ श्री रत्नभूषणजी के पाट भट्टारक जी महाराज श्री १०८ श्री ललितकीर्ति जी महाराज पाट विराज्या वैशाख सुदी ३ ने त्यागी दीक्षा में आया जोवनेर सु प० हीरालालजी पन्नालाल जयचन्द उतरया दौलतरामजी लोढा ओसवाल की होली में पडित नोगावा का उतरया एक जायगा ११ ताई रह्या।

को पूर्ण की थी ।[1] सवत् १६५७ मे भादवा बुदी ६ के दिन पुराणसार (सागरसेन) को साह निरमल ने पाण्डुलिपि कराई थी । उस समय वहा अकबर का शासन था ।[2]

३. नरायणा

नरायणा शाकम्भरी प्रदेश का प्रमुख नगर है । इस नगर की प्राचीनता के बारे मे कोई निश्चित तिथि नही दी जा सकती लेकिन ११वी–१२वी शताब्दी मे यह नगर चौहान राजाओ का प्रिय नगर था ऐसा कुछ ऐतिहासिक प्रलेखो से पता चलता है । उस समय यह नगर जैन सस्कृति का विशेष केन्द्र था । यहा के भूगर्भ मे प्राप्त ११वी एव १२वी शताब्दी की जो कला पूर्ण मूर्त्तिया मिली है उनसे इस नगर के महत्त्व पर और भी प्रकाश पडता है । "सकलतीर्थ स्तोत्र" मे नरायणा को नराण के नाम से सम्बोधित किया गया है और उसकी तीर्थ के रूप मे वन्दना की है । सवत् १०८३ माघ सुदी १४ को स्थापित आचार्य वरसेन के चरण यहा के मन्दिर मे विराजमान है । तथा सवत् ११०२ एव ११३५ मे प्रतिष्ठापित यहा और भी प्रतिमाए है जो इस नगर के प्राचीन सास्कृतिक वैभव की ओर स्पष्ट सकेत है ।[3]

यहा के दोनो मन्दिरो मे ही ग्रन्थ सग्रहालय है । जिसमे ग्रन्थो का अच्छा संग्रह है । जयपुर के एक भण्डार मे सवत् १६५३ की आशाधर के जिनसहस्रनाम स्तोत्र की एक पाण्डुलिपि है जिसका लेखन इसी नगर मे सम्पन्न हुआ था । इसे भट्टारक श्री प्रभाचन्द्र की शिष्या बाई तेजमती के उपदेशनार्थ बाई अजीतमती ने लिखवाया था ।[4] दि० जैन मन्दिर दबलाना मे इसी नगर मे प्रतिलिपि की हुई

---

१ सहर वास अजमेर में तहा एक सरावग जान
   नाम तास छीतर कहे गोत्र ज कालो मान ।
   कोई दिन वहा सुख सो रह्यो फेर कोई कारण पाय ।। नमत काम आजीविका सहर इन्दौर में आय, ग्रन्थ सूची पचम भाग – पृष्ठ ११८१

२ सवत् १६५७ वर्षे भादवा बुदी ६ वार शुक्रवार अजमेर गढ मध्ये श्रीमद् अकबर साहि महासुरत्राण राज्ये लिखित च जोसी सूरदास साह घाणा तत्पुत्र साह निरमल ।

३ जैन लेख सग्रह – महावीर भवन जयपुर ।

४ सवत् सोल १६५३ त्रेपनावर्षे श्री मूलसघे भ. श्री विद्यानन्दि तत्पट्ट भ. श्री मल्लिभूषण तत्पट्टे भ श्री लक्ष्मीचन्द तत्पट्टे भ श्री वीरचन्द्र तत्पट्टे भ श्री ज्ञानभूषण तत्पट्टे भ श्री प्रभाचन्द्र तत्पट्टे भ वादिचन्द्र तेषा मध्ये श्री प्रभाचन्द्र चेली बाई तेजमती उपदेशनार्थ बाई अजीतमती नारायणा ग्रामे इद सहस्रनामस्तोत्र निजकर्मक्षयार्थं लिखित ।

सवत् १६६७ की एक भक्तामरस्तोत्र टीका की पाण्डुलिपि है जिसकी श्री जिणदास के शिष्य हर्षविमल ने पाण्डुलिपि की थी।[1] इसी तरह बूंदी के दि जैन पार्श्वनाथ मन्दिर चौगान मे भक्तामरस्तोत्र की एक और पाण्डुलिपि सग्रहीत है जिसकी पाडुलिपि सवत् १६८२ की गई थी।[2] नरायणा मे जब भट्टारक जगत्कीर्ति का विहार हुआ था तो उनके शिष्य दोदराज ने ग्रन्थ की प्रतिलिपि करके उन्हे भेट मे दी थी।[3] राजस्थान के भण्डारो मे और भी पचासो पाण्डुलिपिया मिलती हैं जिनका लेखन कार्य नरायणा मे ही सम्पन्न हुआ था।

नरायणा जयपुर से अजमेर जाने वाले रेलवे मार्ग पर फुलेरां जक्शन से अगला स्टेशन है। यह ग्राम केवल जैन सस्कृति का ही केन्द्र नही रहा किन्तु यहा दादू पथ का भी प्रमुख नगर माना जाता है। राजा भोज ने इस नगर को उन्हे जागीर मे दे दिया इसलिए यहाँ बडे तेजी से दादूपथ के प्रचार प्रसार का कार्य सम्पन्न हुआ था।

४. मोजमाबाद

शाकम्भरी प्रदेश के प्राचीन नगरो मे मोजमाबाद का नाम विशेषत उल्लेखनीय है। इस नगर की स्थापना कब हुई और इसका नाम मोजमाबाद क्यो पडा इसकी अभी खोज होना शेष है। लेकिन नरायणा के समीप ही होने के कारण यह नगर भी १२वी शताब्दी के पूर्व ही अस्तित्व मे आ गया था। १६वी शताब्दी के आरम्भ मे मोजमाबाद के मैदान मे आमेर के राजा रतनसिंह एव वहा के राजकुमार सांगा में जमकर लडाई हुई और अन्त मे विजयश्री राजकुमार सागा के हाथ लगी। इसी राजकुमार सागा ने अपने नाम से सागानेर को नया रूप दिया और उसे फलते फूलते नगर के रूप मे परिवर्तित किया। विक्रम की १७वी शताब्दी मे मोजमाबाद नगर का वैभव अपनी चरम सीमा पर था। मुगल बादशाह एव जयपुर के शासक दोनो ही इस नगर से आकृष्ट थे। एक जनश्रुति के अनुसार जयपुर के महाराजा मानसिंह प्रथम का बाल्यकाल का कुछ समय यहीं व्यतीत हुआ था और उनकी माताजी का देहान्त भी इसी नगर मे हुआ था। जिनकी स्मृति मे यहा छत्रिया बनी हुई है। जो रानीजी की छत्री के नाम से आज भी प्रसिद्ध है।

---

१ सवत् १६६७ वर्षे ग श्री गढ श्री जिणदास शिष्य ग. हर्षविमल लिखित नरायणा नगरे स्वय पठनार्थं

२ ग्रन्थसूची पचम भाग पृष्ठ ७४७

३ ग्रन्थसूची भाग–५ प. स ७४३

सवत् १७९३ चैत्र बुदी २ के दिन मोजमाबाद क्षेत्र मे स्थापित घमाणा गाव मे जोधपुर के महाराजा अभैसिह जी पधारे थे जिनके स्वागतार्थ जयपुर के महाराजा सवाई जयसिह स्वय उपस्थित थे। वे उस गाव मे आठ दिन रहे तथा विभिन्न राजनैतिक समस्याओ पर विचार-विमर्श किया और दोनो नरेश वहा से अपनी अपनी राजधानियो को वापिस गये।

साहित्य एव कला की दृष्टि से मोजमाबाद की अपनी विशेपता है। इस नगर ने कवियो को जन्म दिया। यह पाण्डुलिपिया लिखने वालो का केन्द्र बना, इसने मन्दिर निर्माण की कला को राजस्थान भर मे जागृत किया। हजारो मूर्तियो की प्रतिष्ठापना करके अपना एक नया कीर्तिमान स्थापित किया तथा सैकडो ग्रन्थो को सुरक्षित रखकर भारतीय साहित्य को नष्ट होने से बचाया। जिस प्रकार भोपाल के तालाब प्रसिद्ध है उसी प्रकार यह नगर भूमिगत मन्दिरो अर्थात् भौहरो के लिए प्रसिद्ध है। इन भूमिगत मन्दिरो मे प्रवेश करते ही अपूर्व शान्ति का अनुभव होने लगता है।

जयपुर और अजमेर के मध्य मे स्थित यह नगर एक समय साहित्य निर्माण एव उसके प्रचार का राजस्थान मे प्रमुख केन्द्र रहा। विक्रम सवत् १६६० मे यहा हिन्दी के जैन कवि छीतर ठोलिया हुए जिन्होने इसी नगर मे रहते हुए होलिका चौपाई को छन्दोबद्ध किया। उस समय यह नगर आमेर के महाराजा मानसिह प्रथम के शासन मे था। कवि ने अपनी कृति के अन्त मे कृति का समाप्ति काल, नगर वर्णन एव महाराजा मानसिह के नाम का उल्लेख किया है।

सोलासे साठे शुभ वर्ष,
फाल्गुण शुक्ल पूर्णिमा हर्ष।
सो ह मोजमाबाद निवास,
पूजै मन की सगली आस।
सो है राजा मान को राज,
जिहि बाबो पूरन लग पाज।
सुखी सबे नगर मे लोग,
दान पुन्य जाने सहु भाग।
यह विधि कलयुग मे दिन राति,
जाणे नही दुख की जाति।
छीतर ठोल्यो विनती करे,
हिवडा माँहि जिनवाणी धरे।

छीतर ठोलिया के एक वर्ष पूर्व यहा के निवासी नानू गोधा के आग्रह से भट्टारक वादि भूषण के शिष्य आचार्य ज्ञानकीर्ति ने सस्कृत मे यशोधर चरित नामक काव्य की रचना करके यहा की साहित्यक गतिविधियो की वृद्धि मे अपना योगदान दिया था। नानू गोधा उस समय महाराजा मानसिह के प्रधान अमात्य(मन्त्री) थे। जब कवि ने इस ग्रन्थ की समाप्ति की तो नानू गोधा महाराजा मानसिह के साथ बगाल के अकबरनगर मे थे। कवि ने अपनी कृति के परिचय भाग मे महाराजा मानसिह को राजाधिराज की उपाधि से सम्बोधित किया तथा लिखा है कि उनके चरण कमल अनेक राजाओ के मुकुटो से पूजित थे, अपनी दान प्रकृति से उन्होने सारे विश्व को सन्तुष्ट कर रखा था तथा जिसका यश सूर्य के समान चारो दिशाओ मे व्याप्त था। ऐसे महाराजा का महान अमात्य था नानू गोधा जिसका यश भी अपने स्वामी के समान चारो दिशाओ मे व्याप्त था। जिन्होने कैलाश तथा सम्मेद शिखर की तीर्थ यात्राये की थी तथा जिनकी नव साहित्य निर्माण करवाने की ओर विशेष रुचि थी। यशोधर चरित एक प्रबन्ध है। इस काव्य की एक पाण्डुलिपि जयपुर के महावीर भवन जयपुर के सग्रहालय मे उपलब्ध है। प्राप्त पाण्डुलिपि स० १६६१ अर्थात् अपने रचनाकाल के केवल २ वर्ष पश्चात् की ही लिखी हुई है।

सवत् १६६४ (सन् १६०७) ज्येष्ठ कृ० ३ के दिन यहाविशाल स्तर पर पच कल्याणक प्रतिष्ठा समारोह का आयोजन किया गया। वह दिन नगर के लिए अपने इतिहास का स्वर्ण दिन था। इस दिन यहा जैन मन्दिर का निर्माण होने के पश्चात् एक बडा भारी समारोह आयोजित किया गया जो पच कल्याणक प्रतिष्ठा के नाम से विख्यात है। प्रतिष्ठाकारक थे महाराजा मानसिंह के विश्वस्त अमात्य स्वय नानू गोधा। इसलिए यह समारोह राजकीय स्तर पर आयोजित किया गया। इसमे राजस्थान के ही नही समूचे देश के विभिन्न ग्रामो एव नगरो से लाखो की सख्या मे जैन एव जैनेतर समाज एकत्रित हुआ और भगवान ऋषभदेव की मूर्ति सहित हजारो की सख्या मे जिन मूर्तियो की प्रतिष्ठाविधि सम्पन्न हुई। सम्भव है इस समारोह मे मुगल बादशाह अकबर के प्रतिनिधि तथा स्वय महाराजा मानसिह भी सम्मिलित हुए हो, क्योकि प्रतिष्ठा समारोह एव मन्दिर निर्माण को देखकर ऐसा लगता है कि जैसे नानू गोधा ने उस समय अपनी समस्त विशाल सम्पत्ति का मुक्त हस्त से वितरण करके उसका सस्कृति, साहित्य एव कला के विकास मे सदुपयोग किया था। इस प्रतिष्ठा मे प्रतिष्ठापित जैन मूर्तियाँ राजस्थान के मन्दिरो मे ही नही किन्तु मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश के विभिन्न मन्दिरो मे प्रतिष्ठापित है। इस प्रतिष्ठा से मोजमाबाद नगर स्वय गौरवान्वित हो गया। राजस्थान मे उसका विशिष्ट स्थान बन गया। इसी परिवार मे सवत् १८१६ मे दौलतराम गोधा हुए जिनका जयपुर दरबार ने अपना रूमाल देकर सत्कार किया।

अपनी कला एव विशालता के लिये शीघ्र ही नानू गोधा द्वारा निर्मित यह जैन मन्दिर सारे राजस्थान मे प्रसिद्ध हो गया । लोग सुदूर प्रान्तो से दर्शनार्थ आने लगे और सैकडो वर्षो तक यह उनका तीर्थ स्थान बना रहा । मन्दिर के ऊपर जो तीन शिखर है वे मानो दूर से ही जन साधारण को अपनी ओर आमन्त्रित करते है तथा साथ ही मे जगत् को सम्यक श्रद्धा, सम्यक ज्ञान एव सम्यक आचरण के परिपालन का सन्देश देते है । मन्दिर के प्रवेश द्वार से आगे एक विशाल चौक और आता है । जिसके निज मन्दिर के प्रवेश वाला द्वार का भाग अत्यधिक कलापूर्ण है । इसे आठ भागो मे विभक्त किया गया है तथा श्वेत एव लाल पाषाण पर कला की अद्भुत कृतियो को उतारा गया है । मुख्य द्वारो पर विभिन्न भाव नृत्यो के साथ देव देवियो के चित्र है । देव तथा देविया पूर्णत समलकृत तथा सज्जा सहित दिखाये गये है । एक चित्र मे सरस्वती अपने हाथ से हस को मोती चुगा रही है । इन देवियो की विभिन्न नृत्य मुद्राये देखकर ऐसा आभास होने लगता है मानो दर्शक गण किसी इन्द्र सभा मे आ गये हो । प्रवेश द्वार पर गणेश जी की मूर्ति खुदी हुई है जिससे जैन एव ब्राह्मण सस्कृति के समन्वय का पता चलता है । कही पर हाथी अपनी सूड से जल भर कर तीर्थंकरो का अभिषेक कर रहा है तो कही सिंहवाहिनी देवी की मूर्ति दिखाई देती है । सचमुच लाल एव श्वेत पाषाण पर दर्शित यह कला भारतीय एव राजस्थानी कला का अच्छा प्रस्तुतीकरण है ।

इस मन्दिर मे दो भूमिगत मन्दिर भी है । जिनमे तीर्थंकरो की भव्य एवं कलापूर्ण मूर्तिया विराजमान है । सभी मूर्तिया स० १६६४ मे प्रतिष्ठापित है । और अपने नानू गोधा की कीर्ति को अनन्तकाल तक स्थाई रखने को उद्यत है । भगवान आदिनाथ की जो विशाल पद्मासन मूर्ति है उसमे कलाकार ने मानो अपनी समस्त कला को उडेल दिया है । यह उसके वर्षो की साधना होगी । ऐसी सौम्य एव मनोज्ञ मूर्तिया बहुत कम मन्दिरो मे उपलब्ध होती है ।

मन्दिर निर्माण का कार्य सम्भवत बराबर चलता रहा होगा और १७८० मे ही छत्री निर्माण के साथ वह समाप्त हुआ होगा । छत्री मे जो लेख अकित है उसके अनुसार इसके निर्माण मे उस समय ११०१ रु लगे थे । चौधरी नन्दलाल के पुत्र जोधराज ने इसके निर्माण कराने मे अपना योग दिया । मकराना के नागराज बलदेव छत्री निर्माण के प्रमुख शिल्पकार थे ।

मोजमाबाद के तालाब के किनारे पर स्थित त्रिपोलिया द्वार आज भी अपने प्राचीन वैभव की याद दिला रहा है । इस पर अकित जैन मूर्तियो से पता चलता है कि यह भी कोई जैन सास्कृतिक स्थान था । कुछ वर्षो पूर्व तक यहा तीज गणगौर

पर अच्छा मेला भरता था। इसके पास ही आसजी का मन्दिर है कहते हे मुस्लिम शासको को यहा नागा सम्प्रदाय के एक साधु ने अपने चमत्कार दिखला कर गायो की रक्षा की थी।

मोजमाबाद हस्तलिखित पाण्डुलिपियो के सग्रह की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण स्थान हे। यहा के ग्रन्थ सग्रहालय मे प्राकृत, सस्कृत, अपभ्र श एव हिन्दी के ग्रन्थो की पाण्डुलिपिया उपलब्ध है, जो दर्शन, साहित्य एव कला पर शोध करने वाले विद्यार्थियो के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो सकती हे। प्रवचनसार (कुन्दकुन्द) जैनेन्द्र व्याकरण, षट्कर्मोपदेश रत्नमाला, (अमर कीर्ति) त्रिषष्ठि स्मृति (आशाधर) योगसार (अमितगति), तत्वार्थ सूत्र टिप्पण (योगदेव), तथा अपभ्र श के आदि पुराण पर प्रभाचन्द्र का टिप्पण इन्ही ग्रन्थो के सग्रह मे हे। इसी भण्डार मे कृष्ण-रुक्मिणिवेलि की एक अत्यधिक प्राचीन एव शुद्ध पाण्डुलिपि सुरक्षित हे। जिस पर लाखा चारण की टीका है। लाखा चारण कृत टीका वाली पाण्डुलिपि अभी तक राजस्थान के अन्य भण्डारो मे उपलब्ध नही हो सकी है। यशोधर चरित की दो सचित्र पाण्डुलिपिया शास्त्र भण्डार की अमूल्य धरोहर हे।

नगर के बाहर जो जैन नशिया है उसके मुख्य द्वार पर एक लेख अकित है। यह लेख सवत् १९३२ का हे। जिसमे हिन्दू और मुसलमान बन्धुओ से धार्मिक स्थानो की पवित्रता बनाये रखने का आग्रह किया गया हे। यहा चारभुजा का प्राचीन वैष्णव मन्दिर भी हे। अभी गत कुछ वर्ष पूर्व ही यहा गाव मे विचरने वाले एक साड का स्मारक बनाया गया है, जो आस-पास के ग्रामीण जनो की श्रद्धा का केन्द्र बनता जा रहा है। मानव मात्र ही नही किन्तु पशु तक के प्रति स्नेह एव श्रद्धा का यह अद्भुत स्मारक है।

५. मारोठ

मारोठ राजस्थान के नागौर जिले का प्रमुख नगर है। कुचामन रोड स्टेशन से ११ किलोमीटर दूरी पर स्थित यह नगर प्राचीनकाल मे महाराष्ट्र नाम से भी जाना जाता था। नयचन्द्रसूरि के हम्मीर महाकाव्य (१४वी शताब्दी) तथा भ सकलकीर्ति द्वारा रचित सुभाषितावली की गुलाबचन्द्र काला द्वारा लिखित पाण्डुलिपि मे (सवत् १७६५) मे इसी नाम का उल्लेख मिलता हे।[1] चारो ओर पहाड से घिरा हुआ यह नगर सैनिक दृष्टि से भी इस क्षेत्र का महत्त्वपूर्ण स्थान माना जाता रहा हे। चौहान राजपूतो के विभिन्न सामन्तो द्वारा यह शासित होता था। सैकडो वर्षो तक यहाँ सास्कृतिक विकास की ओर समय-समय पर कार्य रहते जाते रहे।

जैनधर्म एव सस्कृति का भी यह नगर प्रमुख केन्द्र रहा है। और ग्राज भी नागौर जिले मे दिगम्बर जैन समाज की प्रमुख वस्तियो मे से है। रेलवे एव ग्रावागमन के साधनो के कठिनाइयो के उपरान्त भी जैन सन्तो एव ग्राचार्यो ने इसको अपने विहार का प्रमुख केन्द्र वनाया और वे समय समय पर प्रतिष्ठा एव ग्रन्य आयोजनो के माध्यम से भगवान महावीर का सन्देश जन जन तक पहुचाते रहे। यहा के मन्दिरो मे ११वी एव १२वी शताब्दी की कितनी ही मनोज्ञ मूर्तियाँ है। यहा के मन्दिर मध्य युग मे निर्मित हुए थे जिनमे आदिनाथ का चैत्यालय सवत् १३८५ मे निर्मित हुग्रा था तथा वेनीराम छावडा ने जिसके निर्माण मे योग दिया था। ग्रादिनाथ चैत्यालय के निर्माण कराने का श्रेय जीवनदास पाटोदी को है जिसका निर्माण सवत् १४२६ मे समाप्त हुग्रा था।[1] तेरापथी मन्दिर का निर्माण सम्वत् १८५२ मे हुग्रा था इससे उस समय शाकम्भरी एव मारवाड प्रदेश मे तेरापथ का प्रचार होने का प्रमाण मिलता है।

मारोठ मे भट्टारको का ग्रत्यधिक विहार होता रहा। नागौर गादी के तीन भट्टारको[2] का इसी नगर मे वडे ठाट वाट से पट्टाभिषेक हुग्रा था ग्रौर जिसमे हजारो श्रावको ने सम्मिलित होकर नवदीक्षित भट्टारको का स्वागत किया था। गौतमस्वामी चरित्र के निर्माता (सवत् १७१६) धर्मचन्द्र मारोठ के ही निवासी थे। ग्रजमेर के भट्टारक विजयकीर्ति ने जव सवत् १८१४ मे मारोठ मे विचार किया तो उनके स्वागत मे ग्रनेक उत्सव ग्रायोजित किये गये ग्रौर रथयात्राए निकाली गयी।

साहित्य निर्माण एव सग्रह की दृष्टि से भी मारोठ का उल्लेखनीय स्थान माना जाता है। यहाँ पर पहिले एक विशाल भण्डार था लेकिन हमारी असावधानी के कारण वे सभी पाण्डुलिपियाँ दीमक एव चूहो का शिकार वन गयी।

सवत् १६४३ की कार्तिक शुक्ला तृतीया को पाडे लूणा ने वाग्भट्टालकार की पाण्डुलिपि तैयार की थी।[3] इसी तरह देवनन्दि के लब्धिविधान उद्यापन की पाण्डुलिपि इसी नगर मे सम्पन्न हुई थी। दि० जैन मन्दिर पाटोदी जयपुर के शास्त्र भण्डार मे मारोठ नगर की पचायत को लिखी एक पत्रिका प्राप्त हुई है जिसमे

---

1 Ancient towns & cities of Rajasthan by K C Jain Page 250

२ भट्टारक पट्टावली महावीर भवन जयपुर

३ सवत् १६४३ वर्षे कार्तिक मासे शुक्लपक्षे तृतीया तिथौ शुक्रवासरे लिखित पाडे लूणा माहरोठ नगरे स्वान्ययो पठनार्थं।

मारोठ के सम्वन्ध मे उल्लेखनीय सामग्री मिलती हे। उस समय मारोठ मे अपूर्व धार्मिक जागृति थी तथा चारो ओर भगवद्भक्ति, पूजा एव चतुर्विधसघ की यात्रा आदि होती थी। यह पत्रिका सवत् १८५८ की लिखी हुई है।[1] श्रेयकर मुनी ने मारोठ मे सिंहासन द्वात्रिंशिका को रचना की थी। यह कृति सस्कृत भाषा मे निवद्ध है। रघुवश महाकाव्य की एक प्रति प० अनन्तराम के शिष्य उदयराज ने सवत् १७६८ की मगसिर सुदी ११ को यही स्वपठनार्थ लिखी थी।

सवत् १७९४ माघ सुदी १३ रविवार के शुभ दिन मारोठ मे एक विशाल पचकल्याणक प्रतिष्ठा का आयोजन सम्पन्न हुआ था। उस समय मारोठ जोधपुर राज्य का एक भाग था तथा वहाँ के ठाकुर का नाम बखतसिंह वेरोसाल था। मडलाचार्य अनन्तकीर्ति भट्टारक गादी पर सुशोभित थे। प्रतिष्ठा कराने वालो मे गिरधर साह के सुपुत्र रामसिंह तथा उमकी पत्नी रामसुदे तथा पुत्र दौलतराम, साहिबराम, गगाराम के नाम उल्लेखनीय हे।

इसी नगर में भट्टारक शुभचन्द्र कृत श्रेणिकचरित्र की एक पाण्डुलिपि गुलावचन्द छावडा ने सवत् १८१६ भादवा सुदी १४ के शुभ दिन लिख कर पूर्ण की थी। इसी तरह भ० सकलकीर्ति के शान्तिनाथ चरित्र की प्रतिलिपि ला० सिभुदास ने करायी थी। जिसकी प्रशस्ति निम्न प्रकार है —

"महारोठ नगरे महाराजाधिराज महाराजा मानसिंह जी राज्ये प्रवर्तमाने मिडत्यासाखे महाराज श्री महेमदास जी श्री दुर्जनसाल जी प्रवर्तमाने खडेलवाल जातीय लाला सिभराम जी ने प्रतिलिपि करापिता।"

शहर मारोठ की पत्री

सवज्ञजिन प्रणमामि हित, सुभथान पलाडा थी लिखित।
सुमुनी महीचन्दजि को विदय, नवनन्द हुकम लुणॉ सदय ॥१॥

किरपा फुणि मोहन जीवणाय, अपरपुर मारोठ थानकय।
सरवोपम लायक थान छजे, गुरु देखि मु आगम भक्ति यजे ॥२॥

तीर्थंकर ईस भक्ति घरे, जिन पूज पुरदर जेम करे।
चतुसघ सुभार धुरधरय, जिन चैति चैत्यालय कारकय ॥३॥

व्रत द्वादस पालस सुद्ध खरा, सतरे पुनि नेम धरे सुवरा।
वहु दान चर्तुविध देय सदा, गुरू शास्त्र सुदेव पुजे सुखदा ॥४॥

धर्म प्रश्न जु श्रेणिक भूप जिसा, सम श्रेयाँस दानपनि जु तिसा।
निज वस जु व्योम दिवाकरय, गुण सौख्य कलानिधि बोधनय ॥५॥

सु इत्यादिक वोयम योगि वहु, लिखियो जु कहाँ लग वोम सहु।
दयुडा गोठ जु श्रावग पच लसे, शुद्धि वुद्धि समृद्धि आनन्द वसे ॥६॥

तिह योगि लिखे ध्रम वृद्धि सदा, लहियो सुख सपति भोग मुदा।
॥७॥

इह थानक आनन्द देव जपै, उत चाहत खेम जिनेन्द्र कृपै।
अपञ्च जु कागद आइ इते, समाचार वाच्या परसन निते ॥८॥

सहु वात जु लाय ध्रमकर, ध्रम देव गुरु पसि भक्ति भर।
मर्यादा मुबारक लायक हो, कल्पद्रुम काम सुदायक हो ॥९॥

यशवत विनेवत दातृ गहो, गुणशील दयाध्रम पालक हो।
इत हे व्यवहार सदा तुम को, उपगति तुमे नहिं औरन की ॥१०॥

लिखियो लघु को विद्यमान यहु, सुख पत्र जु वाहुडता लिखि हु।
वसु वाण वसु पुनि चन्द्र किय, वदि मास असाठ चतुर्दशिय ॥११॥

इह त्रोटक छद सुचाल मही, लिखवी पतरी हित रीति वही।
॥१२॥

तुम भेजि हु यैक सकरनैं, समचार कह्या मुख तैं सुइने।
इतके समचार इते मुख ते, करज्यो परवान सवे मुखतें ॥१३॥

इति पत्रिका सहर म्हारोठ की पचायती नु ॥

७ जोबनेर

शाकम्भरी प्रदेश के प्रत्येक ग्राम एव नगर देश की प्राचीन सास्कृति एव इतिहास की नयी परत खोलने वाले है। प्राचीन काल मे ही इन गावो एव नगरो ने देश के विकास की प्रत्येक दिशा मे अपना योगदान दिया है। जोबनेर भी ऐसा ही कस्बा है जिसका इतिहास अपने आप मे महत्त्वपूर्ण है। जयपुर से फुलेरा जाने वाली रेल्वे लाइन पर जोबनेर आसलपुर स्टेशन है जहा से जोबनेर ८ मील दक्षिण की ओर स्थित है। कृषि शिक्षा का केन्द्र होने के कारण यह नगर राजस्थान में ही नही किन्तु सारे देश मे भी प्रसिद्ध है।

जोबनेर अत्यन्त प्राचीन नगर है। वशभास्कर मे एक उल्लेख आता है कि शापित वीसलदेव जब 'ढूढ' नामक नरभक्षी राक्षस बन कर लोगो को ढूढ ढूढ कर खाने लगा तो अजमेर उजाड हो गया तब उसी नरभक्षी राक्षस ने ईशानकोण की

और जोबनेर क्षेत्र मे उत्पात मचाना प्रारम्भ कर दिया। प्राणियो को खाकर वह अपनी थकान दूर करने के लिये जोवनेर की पहाडी पर उकडू बैठ जाता था।[1] स्पष्ट ही यह जनश्रुति निराधार है एव स्वयं सूर्यमल ने इसकी सत्यता मे अविश्वास प्रकट किया है।

जोवनेर जैन धर्म एव सस्कृति का प्राचीन केन्द्र रहा है और जब से शाकम्भरी प्रदेश मे आया तब से जोनेवर का और भी विकास हुआ। यहा ढेहली, चाटसू एव आमेर तथा नागौर के भट्टारको का बराबर आवागमन होता रहा। सर्वप्रथम सवत् १६०१ वैशाख सुदी १ के शुभ दिन नागौर गादी के भट्टारक विशालकीर्ति का पट्टाभिषेक जोवनेर मे हुआ।[2] यह प्रथम अवसर था जब किसी धर्माचार्य का पट्टाभिषेक समारोह आयोजित किया गया था। विशालकीर्ति १० वर्षतक नागौर के भट्टारक रहे। सवत १६११ आसोज सुदी ४ को लक्ष्मीचन्द्र का नागौर पट्ट के भट्टारक पद पर पुन जोवनेर मे पट्टाभिषेक हुआ।[3] इन्होने देश के विभिन्न स्थानो मे विहार करके जन जन में भगवान महावीर के उपदेशो का प्रसार किया।

सवत् १६३१ ज्येष्ठ सुदी पचमी को नागौर गादी पर सहस्रकीर्ति भट्टारक पद पर आसीन हुए। इनके पट्टाभिषेक के लिये भी जोवनेर को ही चुना गया और वहाँ उस दिन एक समारोह मे उनको भट्टारक पद पर प्रतिष्ठित कर दिया गया।[4] सहस्रकीर्ति १९ वर्ष तक भट्टारक रहे और अपने स्वय के विकास के समान ही जनता का चरित्र बल ऊंचा उठाते रहे। सहस्रकीर्ति के स्वर्गवास के पश्चात् सवत १६५० मे नेमिचन्द्र को भट्टारक पद के योग्य समझा गया। और उसी वर्ष की श्रावण सुदी १३ की पावन तिथि को जोवनेर मे ही उनका पट्टाभिषेक कर दिया गया।[5] इस प्रकार ७० वर्ष से भी अधिक समय तक जोवनेर नागौर गादी के भट्टारको की गतिविधियो का सर्वाधिक केन्द्र रहा। इसके पश्चात् २५० वर्ष तक जोवनेर

---

१ खाय मनुज उतके सुखल, । ईस कोन दिस ओर। जुब्बनेर पुर लो जबहि, रह्यो मचावत रोर ॥ इतके जन खावत अटत, कबहु श्रात अतिकाय। जुब्बनेर गिरिशृग जो उकरु बैठत आय ॥ वशभास्कर पृष्ठ १३०३–४
२ भट्टारक पट्टावलि—महावीर भवन जयपुर के सग्रह मे।
३ वही
४ भट्टारक सम्प्रदाय डा० जोहरापुरकर पृष्ठ सख्या ११५
५ " " ११५

साहित्य निर्माण एव लेखन का प्रमुख नगर माना जाता रहा। राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारो मे ऐसी पचासो कृतिया है जिनका लेखन जोवनेर मे ही हुआ था।

अजमेर के भट्टारकीय शास्त्र भण्डार मे तीन गुटके है जिनका लेखन कार्य सवत १६८७, १७०२ व १७२८–३० मे जोवनेर मे ही हुआ था।[१] इन गुटको मे विभिन्न पाठो का सग्रह है। इसी तरह अजमेर मे ही एक 'सामुद्रिक स्वरुप लक्षण' ग्रन्थ है जिसका लेखन कार्य भी जोबनेर मे ही महापडित टोडरमल के लिए हुआ था।[२] उस समय भी वहा भट्टारको का जोर था। हो सकता है प. टोडरमल का वाल्यकाल जोवनेर मे व्यतीत हुआ हो और वे प्रारम्भ मे भट्टारको के सम्पर्क में भी रहे हो।

महात्मा जयदेव १८वी शताव्दी के अच्छे विद्वान् थे जो ग्रन्थो के लेखन का कार्य करते थे। इन्होने सवत् १८७४ मे त्रिलोकसार भापा की प्रतिलिपि की थी।[3] सवत् १७१४ मे सागानेर के प्रसिद्ध विद्वान जोवराज गोदीका के लिए द्रव्यसग्रह वृत्ति (प्रभाचन्द्र कृत) की प्रतिलिपि हुई।[४] इसके पश्चात् जौवनेर जैसे ग्रन्थ लेखन का मानो केन्द्र वन गया हो। कुछ प्रमुख ग्रन्थो जिनका यहाँ लेखन कार्य हुआ उनकी सूची निम्न प्रकार है—

१ सममसार भापा[५] रूपचन्द लेखनकाल स १७४८ कार्तिक वुदी १२
२ समाधितन्त्र भाषा[६] पर्वत धर्मार्थी–लेखनकाल स १८२७ वैशाख वुदी ५।
३ नेमिनाथपुराण[७] ब्रह्म नेमिदत्त।
४ नागश्री कथा[८]–किशनसिह स १७८५ पौष बुदी ७।
५ अढाई द्वीपपूजा[९] स १८८०

---

१ राजस्थान के जन शास्त्र भण्डारो की ग्रन्थ-सूची पचम भाग–पृ०सं० ६४४–६७३
२ राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारो की ग्रन्थ-सूची पचम भाग पृ० सं० १०१६
३ राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारो की ग्रन्थ सूची पचम भाग
४ ,, ,, ,, चतुर्थ भाग पृ स ३४
५ ,, ,, ,, पचम भाग पृ सं २३०
६ ,, ,, ,, ,, पृ स २३५
७ ,, ,, ,, ,, पृ स २७७
८ ,, ,, ,, चतुर्थ भाग पृ स. २३१
९ ,, ,, ,, ,, पृ सं. २३३

प० पन्नालाल, प० हीरालाल एव प० जयचन्द जोवनेर के १९वी शताब्दी के अच्छे पडित थे। सवत् १९१७ मे अजमेर मे भट्टारक ललितकीर्ति जी का जब पट्टाभिषेक हुआ तो वे तीनो पडित वहाँ जोवनेर के समाज के प्रतिनिधि के रूप मे सम्मिलित हुए थे।[1] ये पडित ग्रन्थ लेखन का कार्य भी करते थे। पॅ० हीरालाल ने सवत् १८७५ को पोप बुदी १० को "शुभाशुभयोग" की प्रतिलिपि की थी।

जोवनेर वैष्णव धर्म का केन्द्र रहा। इसकी पहाडी पर ज्वाला माता का प्रसिद्ध पीठ है जहाँ प्रतिवर्ष मेला भरता हे। तथा दूर दूर से सहस्रों यात्री दर्शनार्थ आते है। ज्वाला माता जोवनेर के खँगारोत क्षत्रियो की कुलदेवी है। इसका प्राचीन काल मे ही बडा महत्त्व रहा है। 'बाँकीदासरी ख्यात" मे उक्त विषय से सम्बन्धित ख्यात भी दी हुई हे।[2]

८. रूपनगढ

किशनगढ मे उत्तर की ओर १४ मील पर रूपनगढ शाकम्भरी प्रदेश का प्राचीन नगर है। अजमेर पट्ट के भट्टारक विद्यानन्द का पट्टाभिषेक इसी नगर मे सवत् १७६६ फाल्गुण बुदी ४ के शुभ दिन सम्पन्न हुआ था। भ विद्यानन्द खण्डेलवाल जाति के झाझरी गोत्र मे पैदा हुए थे। वे अधिक दिन तक जीवित नही रह सके और सवत् १७६९ की मगसिर बुदी ८ के पूर्व ही स्वर्गवासी बन गये।

रूपनगढ मे आज भी जैनो की अच्छी सख्या है। घरो की संख्या ३० है तथा दो प्राचीन मन्दिर हे जिनमे प्राचीन एव कलापूर्ण मूर्तियाँ प्रतिष्ठापित है।

९ कालाडेहरा

कालाडेहरा आजकल शिक्षा का केन्द्र माना जाता है। यह एक अच्छा नगर है जो जयपुर के उत्तर पश्चिम की ओर २९ मील पर स्थित ह। इस नगर मे श्रावको

---

१ राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारो की ग्रन्थ सूची चतुर्थ भाग पृ सं. ४६६

२ लाडणू परै गाव जोगालिये सामोरा रो वास जठारे सामोर महेसदास महाराज गजसिंह जी कू राजी कियो। इणरो भतीजा हे हेगो गणेशदास रो बेटो जिण जोबनेर जाय महाकाली रो वर पायो महेसदास रो भतीजो है जो गणेसदास रो बेटो जोबनेर जालपा देवी री क्रिपा सू विद्यमान हुयो।

बाकीदास की ख्यात पृष्ठ १७९-८०

की अच्छी वस्ती थी एव उनमे धर्म एव सस्कृति के प्रति विशेष प्रेम था। इसलिये यह नगर भट्टारको एव अन्य सतो का विहार स्थल रहा। सर्वप्रथम सवत् १७४५ वैशाख सुदी नवमी के दिन भ० रत्नकीर्ति का यहा पट्टाभिषेक हुआ।[१] ये २१ वर्ष तक भट्टारक पद पर रहे और इस क्षेत्र मे धम के प्रति लोगो मे अभूतपूर्व जाग्रति उत्पन्न करते रहे। सवत् १७६६ मे पुन इसी नगर मे भट्टारक महेन्द्रकीर्ति का वडी धूमधाम से पट्टाभिषेक हुआ। भ महेन्द्रकीर्ति ४ वर्ष से अधिक समय तक जीवित नही रहे सके।

इसी नगर मे पट्टाभिषिक्त होने वाले अजमेर गादी के भ भुवनभूषण का पट्टाभिषेक सवत् १७९७ आषाढ सुदी १० के दिन हुआ। ये छावडा गोत्र के तथा कालाडेहरा के निवासी थे। एक ही स्थान मे तीनँ भट्टारको का पट्टाभिषेक होने से यह स्पष्ट हे कि १८वी शताब्दी मे यह नगर जैन धर्म एव सास्कृति का प्रमुख केन्द्र रहा था। कुछ इतिहासज्ञो का मत है कि काला गोत्र कालाडेहरा से ही निकला था।

कालाडेहरा मे साहित्य लेखन का कार्य भी खूब होता था। राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारो मे कलाडेहरा मे लिखे गये बीसो ग्रन्थ उपलब्ध होते ह। सवत् १६९३ मे पूज्यपाद कृत सर्वार्थसिद्धि की प्रतिलिपि प० श्रीनारायण ने की थी।[४] मृगीसवाद की एक पाण्डुलिपि यहा सवत् १७२३ मे सम्पन्न हुई थी। पाण्डे बीसल ने इसकी प्रतिलिपि की थी। सवत् १७५६ मे शालिहोत्र की पाण्डुलिपि महात्मा कुशलसिंह के आत्मज हरिकृष्ण ने की थी। साह दौलतराम ने सवत् १८०५ मे नामलिंगानुशासन की पाण्डुलिपि की थी तथा प्रस्तुत पाण्डुलिपि अनन्तकीर्ति के शिष्य प उदयराम को भेट की गयी थी।[६] इन्ही पडित जी को सवत् १८०७ मे हनुमच्चरित की पाण्डुलिपि भी भेट की गयी थी। भेट कर्ता थे तुलसीराम मोतीराम गगवाल। कालाडेहरा मे वर्तमान मे तीन मन्दिर ह तथा १५ घर दिगम्बर जैन समाज के हे। जयपुर मे कालाडेहरा का जो नगर का लोकप्रिय मन्दिर है तथा जिसमे भगवान महावीर की श्याम पाषाण की ११वी शताब्दी की खड्गासन मूर्ति ह। उसे भी कालाडेहरा के निवासी किसी अग्रवाल जैन वन्धु ने निर्मित कराया था।

१, २, ३, भट्टारक पट्टावली—महावीर भवन, जयपुर
४ ग्रन्थ-सूची चतुर्थ भाग पृ० स० ४५
५ ग्रन्थ-सूची पचम भाग पृ० स० ९४५
६ ग्रन्थ-सूची पचम भाग पृ० स ५३४

इसी नगर मे एक कल्याणजी का वैष्णव मन्दिर भी है जो यहा का लोकप्रिय मन्दिर माना जाता है ।

१० भादवा

शाकम्भरी प्रदेश मे 'भादवा' ग्राम का उल्लेखनीय स्थान रहा है। यह ग्राम पहिले दो जागीरदारो की जागीर मे था जो वडा पाना एव छोटा पाना के ठाकुर कहलाते थे । पश्चिम रेल्वे की रिवाडी फुलेरा ब्राच लाइन पर भैंसलाना स्टेशन है जहा से यह ग्राम तीन मील दूरी पर स्थित है । यहा के मन्दिर मे हस्त-लिखित ग्रन्थो का अच्छा सग्रह मिलता है । शास्त्र भण्डार मे १५० पाण्डुलिपिया होगी जिनमे द्यानतराय का धर्मविलास, भैया भगवतीदास का ब्रह्मविलास तथा धर्मदास के श्रावकाचार का नाम विशेपत उल्लेखनीय है । इसी ग्राम मे प्रतिलिपि किये जाने वाले ग्रन्थो मे पचपरमेष्ठी पूजा—डालूराम (सवत् १८७६) मोक्षमार्ग प्रकाशक (सवत १८२६), धर्मपरीक्षा (सवत् १८३७), चौवीसठाणा चर्चा (सवत् १८२६) के नाम उल्लेखनीय है ।

राजस्थान के प्रसिद्ध दार्शनिक विद्वान् प० चैनसुखदास न्यायतीर्थ का भादवा ही जन्म स्थान था । पडित जी की प्रारम्भिक शिक्षा भी इसी ग्राममे हुई थी ।

११. दूदू

मोजमाबाद एव नरायणा के वीच मे वसा हुआ 'दूदू' ग्राम मुसलिम शासन मे जैन सस्कृति का अच्छा केन्द्र रहा । एक और मोजमावाद और दूसरी ओर नरायणा होने के कारण यहा भट्टारको एव साधु सन्तो का बराबर आवागमन बना रहा । यहा के पचायती मन्दिर मे ग्रन्थो का अच्छा सग्रह मिलता है लेकिन अभी तक उसकी कोई सूची नही बन पायी हैं । दूदू मे सवत १६३० मे एक पच कल्याणक प्रतिष्ठा भी सम्पन्न हुई थी ऐसा लेख मिलता है । सवत १५६७ आसोज सुदी १० के शुभ दिन इस गाम मे आ० गुणभद्र कृत धनकुमार चरित्र का लेखन कार्य सम्पन्न हुआ था । वर्तमान मे जयपुर से अजमेर जाने वाले राष्ट्रीय मार्ग पर स्थित होने के कारण इस ग्राम का पर्याप्त महत्व बढ गया है । जैनो की अच्छी वस्ती है । मन्दिर प्राचीन है जिसमे १२वी शताब्दी की श्वेत पाषण की मनोज्ञ मूर्त्तिया है ।

१२. रेनवाल (किशनगढ)

रेनवाल (किशनगढ) शाकम्भरी प्रदेश का एक महत्वपूर्ण कस्वा । माना जाता है । वर्तमान मे किशनगढ के विकास के पूर्व रेनवाल मे अच्छी वस्ती थी ।

लेकिन धीरे-धीरे रेनवाल उजडता गया और किशनगढ का विकास होने लगा। १५० वर्ष पूर्व इसको बसाने का श्रेय चौमू के जागीरदार किशनसिंह जी को हैं। आज भी रेलवे स्टेशन, पोस्ट आफिस, टेलीग्राफ एव टेलीफोन आफिस आदि सभी रेनवाल के नाम से ही है।

वर्तमान मे रेनवाल में जैन बस्ती नही है। सभी किशनगढ आकर रहने लगे है। किशनगढ मे एक विशाल जिनालय है, जिसमे भगवान पार्श्वनाथ की मूल नायक प्रतिमा है। यहा के जैन समाज द्वारा समय-समय पर सार्वजनिक कार्य किये जाते रहे हैं। विक्रम स. २००८ मे यहा एक सागाका भवन स्व जमनालाल जी सागाका द्वारा निर्माण कराया गया। इसी भवन का एक भाग दि जैन दातव्य औपधालय के लिये समर्पित किया गया तथा शेप भवन को सार्वजनिक कार्यो के लिये सुरक्षित रखा गया। "कन्हैयालाल सागाका राजकीय माध्यमिक चिकित्सालय" के निर्माण कराने का श्रेय श्री कन्हैयालाल सीताराम सागाका को हैं।

इन्ही सागा का परिवार की एक महिला श्रीमती वसन्ती देवी पाटनी धर्मपत्नी श्री कन्हैयालाल सागाका द्वारा सवत् २०१२ मे वर्धमान चैत्यालय का निर्माण कराया गया।

सुन्दर देवी पाटनी धर्मपत्नी जमनालाल पाटनी द्वारा समवसरण की स्थापना करवा कर भगवान महावीर की चारो दिशाओ मे चार प्रतिमाऐ विराजमान करवायी थी। इन्ही सागाका परिवार के एक सदस्य जमना लाल महावीर प्रसाद ने ६० हजार की लागत का एक विशाल भवन बनवा कर राजस्थान सरकार को विद्यालय के लिये समर्पित कर दिया जिसमे वर्तमान मे सुन्दर देवी पाटनी राजकीय कन्या विद्यालय के नाम से एव कन्या विद्यालय चल रहा है।

यहा का दि. जैन दातव्य औपधालय गत ४५ वर्षो से सचालित होकर जनता की अपूर्व सेवा कर रहा है। करीब इतने ही वर्षो से पूर्व यहा एक महावीर दि जैन विद्यालय स्थापित किया गया था, जिसने २०-२५ वर्षो तक शिक्षा प्रचार का अभूतपूर्व कार्य किया था। आजकल वह छोटे रूप मे सचालित है। इस प्रकार रेनवाल किशनगढ जैन समाज गत सैकडो वर्षो से साहित्य, सस्कृति एव समाज के विकास मे उल्लेखनीय कार्य कर रहा है।

द्वितीय अध्याय

शाकम्भरी प्रदेश प्रारम्भ से ही जैनाचार्यो, भट्टारको, मुनियो एव विद्वानो का प्रदेश रहा है। इन सन्तों ने प्रदेश मे विहार करके जन जन को भगवान महावीर द्वारा प्रतिपादित अहिंसा, सत्य, अचौर्य ब्रह्मचर्य एव अपरिग्रह को जीवन मे उतारने का उपदेश दिया था यही कारण है कि इस प्रदेश मे भगवान महावीर की अहिंसा का जनता पर पूर्ण प्रभाव रहा और जन सामान्य की भावना प्राणी मात्र को बचाने की रही। यह पूरा प्रदेश ही तीर्थ के समान पूजित एव सम्मानित रहा। साभर, नरायणा, नागौर, अजमेर, मोजमाबाद जैसे नगरो मे जैन तीर्थयात्री यहा के मन्दिरो की, जैन सन्तो एव शास्त्र भण्डारो की वन्दना करने आते रहते थे। सिद्धसेन सूरि ने अपनी पुस्तक सकलतीर्थस्तोत्र मे साभर प्रदेश के कुछ प्रमुख तीर्थों का निम्न प्रकार वर्णन किया है—

खडिल्ल डिडूआणय नराण हरसउर खट्टउ देसे
नागउर मुन्विद तसु सभरि देमम्मि वदेमि॥

नागौर एव अजमेर जैसे नगर आचार्यों एव भट्टारको के केन्द्र ही नही रहे किन्तु साहित्य एव सस्कृति के प्रचार प्रसार मे भी ये प्रमुख अभियन्ता रहे तथा साहित्य की अपूर्व सुरक्षा करके इस क्षेत्र मे गौरवशाली कार्य किया। अजमेर तो १०वी, ११वी शताब्दि से ही जैन सन्तो की गतिविधियो का प्रमुख नगर रहा। सवत् ११९८ मे इस नगर मे महाराजाधिराज अर्णोराजदेव के शासन मे आवश्यकनिर्युक्ति की प्रतिलिपि की गई थी[२] जो नगर की १२वी शताब्दि मे सम्पन्न साहित्यिक गतिविधियो की ओर सकेत करती है। अजमेर मे १३वी शताब्दि मे ही भट्टारको की गादी स्थापित हो गई थी और भट्टारक शुभकीर्ति (स० १२६१) तथा भट्टारक

---

१ सी डी दलाल, पृ स १५६ (Descriptive catalague of Manusciqts)
२ Anciest Towns & Cities of Rajasthan by Dr K C Jain Page—

रत्नकीर्ति एव भट्टारक प्रभाचन्द्र (स० १३६०) का इसी नगर मे पट्टाभिषेक हुआ था।[1]

अजमेर के पश्चात् जब भट्टारकों का देहली केन्द्र बना और भट्टारक प्रभाचन्द्र ने देहली मे जाकर सम्राट फिरोजशाह तुगलक के समय दिगम्बर भट्टारकों के त्याग एव तप की प्रभावना की तो सारे देश मे प्रसन्नता की लहर दौड गई तथा दिगम्बर सम्प्रदाय के साधुओ एव भट्टारकों का देश मे जन जन द्वारा स्वागत होने लगा।[2] देहली मे होने वाले भट्टारक शुभचन्द्र, प्रभाचन्द्र एव जिनचन्द्र जैसे भट्टारकों का राजस्थान की ओर विशेष विहार होता रहा और वे शाकम्भरी प्रदेश की जनता को अपने दिव्य सन्देशो से कृतार्थ करते रहे। सम्वत् १५८१ मे पुन भट्टारक रत्नकीर्ति ने नागौर मे स्वतन्त्र भट्टारक गादी की स्थापना की जिससे सारे मारवाड प्रदेश मे धर्म एव साहित्य का प्रचार किया जा सका वे तथा जनता के अधिक सम्पर्क मे आ सके। नागौर की गादी पर एक पट्टावली के अनुसार २७ भट्टारक हुए।[3] अन्तिम भट्टारक देवेन्द्रकीर्ति थे जिनका अभी कुछ ही वर्ष पूर्व स्वर्गवास हुआ था। इस गादी के कारण राजस्थान मे तथा विशेषत साभर प्रदेश एव मारवाड मे जैन धर्म का अधिक प्रचार हो सका और साहित्य सुरक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया। नागौर का शास्त्र भण्डार राजस्थान मे ही नही किन्तु देश मे सबसे महत्त्वपूर्ण तथा विशाल शास्त्र भण्डार माना जाता है।

नागौर शाखा के भट्टारकों का पट्टाभिषेक प्रमुख रूप मे नागौर के अतिरिक्त अजमेर, जोबनेर, मारोठ जैसे नगरो मे हुआ। भट्टारकों के पट्टाभिषेक मे विभिन्न नगरो एव गावो की जैन समाज भारी सख्या मे भाग लेती थी और इस प्रकार ये समारोह भी सैकडो वर्षो तक धर्म प्रभावना के एक अग माने जाते रहे। आमेर गादी के भट्टारक जगतकीर्ति के पट्टाभिषेक मे राजस्थान के ही नही किन्तु देहली उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश मे से भी भारी सख्या मे श्रावकगण सम्मिलित हुए थे।[4]

सम्वत् १७४५ मे भट्टारक रत्नकीर्ति (द्वितीय) मे अजमेर मे पुन भट्टारक

---

१ भट्टारक पट्टावली – महावीर भवन, जयपुर।
२ बुद्धिविलास –बखतराम साह – पृ स ७५–७६
३ भट्टारक सम्प्रदाय – डा वी. पी जोहरापुरकर पृ स १२४–२५
४. भट्टारक पट्टावली – महावीर भवन, जयपुर

गादी की स्थापना की। यद्यपि इस गादी का सम्बन्ध नागौर गादी से पूरी तरह सम्बन्ध नही टूटा था लेकिन इन भट्टारको की अलग ही परम्परा चली। भट्टारक विजयकीर्ति (सम्वत् १८०२) इस गादी के प्रसिद्ध भट्टारक थे। अजमेर मे जो भट्टारकीय शास्त्र भण्डार है वह भी इसी गादी के भट्टारको की देन है।

शाकम्भरी प्रदेश मे केवल नागौर एव अजमेर के भट्टारको का ही विहार नही होता था किन्तु आमेर एव वागड प्रदेश के भट्टारक भी इन प्रदेशो मे विहार करते थे और साहित्य एव संस्कृति के प्रचार मे अपना योगदान देते थे। सम्वत् १७४८ मे वागड के भट्टारक क्षेमकीर्ति सम्मेद शिखर की यात्रा के लिए जब सघ सहित विहार किया तो मालपुरा, नराणा, मोजमाबाद, सागानेर, आमेर आदि नगरो की भी वन्दना की तथा आमेर के भट्टारक जगत्कीर्ति जी से भेंट की।[1]

भट्टारक गादियो की स्थापना

भट्टारक जिनचन्द्र के समय मे नागौर मे स्वतन्त्र भट्टारक गादी की स्थापना हुई। पहिले ये मण्डलाचार्य कहलाते थे लेकिन कुछ समय पश्चात् ये भी अपने आपको भट्टारक लिखने लगे।[2] इस भट्टारक परम्परा मे निम्न प्रकार भट्टारक हुए—

१ भ रत्नकीर्ति
२. भ भुवनकीर्ति–सम्वत् १५७२ आषाढ सुदी २ जाति छाबडा[3]
३ भ विशाल कीर्ति सम्वत् १६०१
४ भ लक्ष्मीचन्द सम्वत् १६११ जाति छाबडा

---

१ त्याहा श्री श्रीपूज्य गिरिपुर आवो श्रीसघनि शिख देईनि। सागपत्तन उदयपुर ना श्री सघनि वदावीनी चैत्र वदि ३ दिने श्री सम्मेदशिखरजी यात्रा सारु चालया मालपुर नराणि मोजाबद, सागानेर आवेर मथुरा ने श्री सघनि वदावीनि नराणि भट्टारक श्री जगतकीर्तिनि मलीनि। संवत १७४८ नु चौमासो आगरे कीघु।
२ गुटका–दि० जैन मन्दिर पाटोदी–सख्या १५२
३ भट्टारक सम्प्रदाय – डा० जोहरापुरकर ने भ०धर्मकीर्ति का नाम और दिया है।

५ भ सहस्रकीर्ति सम्वत् १६३१ जानि पाटनी
६ भ नेमीचन्द मम्वत् १६५० जाति ठोलिया
७ भ यशकीर्ति सम्वत् १६७२ गोत्र पाटनी
८. भ भानुकीर्ति सम्वत् १६६० गोत्र गगवाल
९ भ श्री भूपण सम्वत् १७०५ गोत्र पाटना
१० भ धर्मचन्द्र सम्वत् १७१२ गोत्र सेठी
११ भ देवेन्द्रकीर्ति सम्वत् १७२७ गोत्र सेठी
१२ भ अमरेन्द्र कीर्ति[४] सम्वत् १७३८

भ अमरेन्द्रकीर्ति के पश्चात् भ रत्नकीर्ति (द्वितीय) हुए। इनके दो शिष्य थे एक विद्यानन्द और दूसरे ज्ञानभूषण। भ रत्नकीर्ति कुछ समय तक नागौर गादी पर रहने के पश्चात् अजमेर मे स्वतन्त्र भट्टारक गादी स्थापना की जिसके प्रसिद्ध भट्टारक विजयकीर्ति हुए। नागौर की गादी पर अपने शिष्य ज्ञानभूषण को भट्टारक बना दिया। इसके पश्चात् निम्न भट्टारक और हुए है—

१ रत्नकीर्ति
२. ज्ञानभूपण
३ चन्द्रकीर्ति
४. प्रद्मनन्दि
५ सकलभूपण
६ सहस्रकीर्ति
७ अनन्तकीर्ति
८ हर्षकीर्ति
९ विद्याभूषण
१० हेमकीर्ति
११- क्षेमेन्द्रकीर्ति

---

४ महात्मा सम्प्रदाय मे अमरेन्द्रकीर्ति के स्थान पर सुरेन्द्रकीर्ति का नाम दिया है।

१ भट्टारक सम्प्रदाय—डा० जौहरापुरकर पत्र सख्या १२५

१२ मुनीन्द्रकीर्ति
१३ कनककीर्ति
१४ देवेन्द्रकीर्ति

भ देवेन्द्रकीर्ति नागौर गादी के अन्तिम भट्टारक थे। नागौर गादी का नागपुर, अमरावती आदि विदर्भ के नगरो से भी सम्बन्ध रहा है तथा महाराष्ट्र के अन्य नगरो मे जहा मारवाडी व्यापारी रहते हैं वहा भी वे जाया करते थे।

सम्वत् १७५१ मे भ रत्नकीर्ति ने अजमेर मे जब भट्टारक गादी की स्थापना की तो उनका पुन पट्टाभिषेक का आयोजन किया गया। इसी वर्ष जोबनेर मे एक पच कल्याणक प्रतिष्ठा समारोह हुआ जिसकी प्रतिष्ठा सम्पन्न कराने वाले भट्टारक रत्नकीर्ति ही थे। सघी जेसा ने उक्त प्रतिष्ठा आयोजित की थी।[1] अजमेर की इस पट्ट निम्न भट्टारक हुए—

१ भ रतनकीर्ति
२ भ विद्यानन्द (सम्वत् १७६६)
३ भ महेन्द्रकीर्ति (सम्वत् १७६९)
४ भ. अनन्तकीर्ति (सम्वत् १७७३)
५ भ. भुवनभूषण (सम्वत १७९७)
६ भ विजयकीर्ति (सम्वत् १८०२)
७. भ त्रिलोकेन्द्रकीर्ति
८ भ भुवनकीर्ति (सम्वत् १८५२)
९ भ रतनभूषण
१० भ पद्मनन्दि

भ० पद्मनन्दि अजमेर गादी के अन्तिम भट्टारक थे। उक्त सभी भट्टारको ने राजस्थान के विभिन्न भागो मे विहार किया और भगवान महावीर के सन्देश को जन जन तक पहुचाने का प्रयास किया। इन भट्टारको के अजमेर मे चबूतरे बने हुए हैं। सम्वत् १७६६ मे भ रतनकीर्ति का भ विद्यानन्द ने चबूतरा बनवाया। सम्वत्

---

1. Ajmer Historical and Descriptive P 125
२ देखिये Jainisme in Rajasthan by Dr K C Jain page 86

१८१० मे भ विजयकीर्ति ने अपने गुरू भवनभूषण का का चबूतरा बनवाया। सम्वत् १८५२ मे अजमेर मे भ भुवनकीर्ति के तत्वावधान मे एक विशाल प्रतिष्ठा का आयोजन किया गया। सघही धर्मदास गगवाल इस प्रतिष्ठा के आयोजक थे तथा अजमेर पर उस समय सिंधिया दौलतराव का शासन था।[1]

वैसे तो सभी भट्टारक विद्वान् साहित्य सेवी एव श्रमण सस्कृति के प्रमुख प्रचारक थे लेकिन इनमे निम्न भट्टारको की सेवाये विशेषत उल्लेखनीय हैं

१. भ० प्रभाचन्द्र

ये अजमेर गादी के भट्टारक थे। राजस्थान, देहली, उत्तरप्रदेश उनका कार्य क्षेत्र था। प्रतिष्ठाए सम्पन्न कराना, स्थान स्थान पर विहार करके अहिंसा का प्रचार करना उनका प्रमुख कार्य था। उनके द्वारा प्रतिष्ठापित कितनी ही मूर्तिया राजस्थान के मन्दिरो मे विराजमान है। उन्होने देहली मे फिरोजशाह तुगलक को अपनी विद्यावल से प्रभावित किया था और राघोचेतन को वादविवाद मे हराया था। तथा भट्टारको के पद का गौरव बढाया। एक भट्टारक पट्टावली मे भ० प्रभाचन्द्र के बारे मे जो निम्न प्रकार लिखा है

महावाद–वादीश्वर–वादिपितामह प्रमेयकमलमार्त्तण्डाद्यनेकग्रन्थविधायक श्री महापुराण स्वयमू-सप्तभक्ति-परमात्मप्रकाशक समयसारादिसूत्र व्याख्यान सर्जन सजात कोविद सभाकीर्तिनराणा श्रीमत्प्रभाचन्द्राणा।

इस से ज्ञात होता है कि प्रभाचन्द्र शास्त्रार्थो मे अत्यधिक प्रवीण थे। प्रमेयकमलमार्त्तण्ड, महापुराण, परमात्मप्रकाश, समयसार, तत्वार्थसूत्र आदि ग्रन्थो के व्याख्याता थे तथा पडितो की सभा के भूषण थे। सकलकीर्तिरास मे, प्रभाचन्द्र को मूलसघ का सस्थापक कहा है। इसी तरह आराधनापजिका की सवत् १४१६

---

१ सवत १८५२ वैशाखमासे शुक्लपक्षे तिथि पचानण गुरुवासरे अजमेर महादुर्गे सीधिया दौलतरावजी राज्ये श्री मूलसघे भ० श्री भुवनकीर्ति स्तदाम्नाये गगवाल गोत्रे सघही धर्मदासेन इदं प्रतिमा कारायिता।

को एक प्रशाम्ति मे पभाचन्द्र का देहली के वादशाह फिरोजशाह तुगलक के शासन काल मे होने का उल्लेख किया है।

समय

एक पट्टावलि के अनुमार भट्टारक प्रभाचन्द्र का जन्म सवत् १२९० पोष सुदी १५ को हुआ था। वे १२ वर्ष तक गृहस्थ रहे तथा १२ वर्ष तक साधु की अवस्था मे दीक्षित रहे तथा ७४ वर्ष ११ मास १५ दिन तक भट्टारक पद पर वने रहे।

प्रतिष्ठा कार्य—प्रभाचन्द्र ने देश के विभिन्न भागो मे प्रतिष्ठा विधि का कुशलतापूर्वक सचालन किया। जयपुर, आवा, वयाना तथा देहली मे उनके द्वारा प्रतिष्ठित मूर्तियो के लेख मिलते हैं।

२. भट्टारक पद्मनन्दि

भट्टारक पद्मनन्दि प्रभाचन्द्र के शिष्य थे। भ० प्रभाचन्द्र की आज्ञा से गुजरात क्षेत्र मे विधि विधान सम्पन्न कराने के लिये उन्हे वहा भेजा गया था। एक वार वहा के श्रावको ने भ० प्रभाचन्द्र से वहा की प्रतिष्ठा सम्पन्न कराने की जव प्रार्थना की लेकिन वे वहा नही जा मके और आचार्य पद्मनन्दि को ही सूरी मन्त्र देकर भट्टारक पद पर प्रतिष्ठित कर दिया।[1] भट्टारक पट्टावलि मे पद्मनन्दि का जो परिचय मिलता है वह निम्न प्रकार हैं

---

१ सवत तेरहसी पिचिहुतस्यौ जानि वै, भये भट्टारक प्रभाचन्द्र गुनखानिवै
तिनको आचारिज इक हो गुजरात मे, तहा सवै पचनि मिलि ठानी वात मे कीजे
एक प्रतिष्ठा तौ शुभ काज हवै, करन लगे विधिवत सव ताकौ साजवै। ६१८।
भट्टारक बुलवाये सो पहुचे नही, तवी सवै पचनि मिलि यह ठानी सही
सूरिमत्र वाही आचारिज का दियो, पदमनदि भट्टारक नाम पट्ट कियौ
ताके पाटि सकलकीरति मुनिवर भये तिन समोधि गुजजात देख अपने
किये। ६२०।

सवत् १३८५ पोष सुदी ७ पद्मनन्दि जी गृहस्थ वर्ष १० मास ७ दीक्षा वर्ष २३ मास ५ पट्टस्थ वर्ष ६५ दिन १८ अन्तर दिन १० सर्व आयु वर्ष ९९ मास ० दिन २८।

पद्मनन्दि पर सरस्वती का पूरा वरद हस्त था। एक बार उन्होंने पाषाण की सरस्वती प्रतिमा को मुख से बुलाया था ऐसा उल्लेख मिलता है।[1] आचार्य पद्मनन्दि अपने समय के बडे विद्वान भट्टारक थे। इनके सघ मे अनेक साधु एव साध्विया थी। इनके चार शिष्य प्रधान थे। इनमे भट्टारक सकलकीर्ति ने ईडर मे, भ० शुभचन्द्र ने देहली मे, भ० देवेन्द्रकीर्ति ने सूरत मे भट्टारक गादी की स्थापना की। पद्मनन्दि की १५ रचनायें प्राप्त हो चुकी है जो सभी सस्कृत भाषा मे निबद्ध है। सागानेर के सघीजी के मन्दिर मे जो शान्तिनाथ की प्रतिमा है जिसकी प्रतिष्ठा इनही के द्वारा सवत् १४६४ मे अजमेर मे सम्पन्न हुई थी।[2] इसी तरह इनके द्वारा प्रतिष्ठापित मूर्ति भरतपुर के पचायती मन्दिर मे भी विराजमान है।

३ भट्टारक धर्मकीर्ति

ये नागौर गादो के भट्टारक थे। सवत १५९० की चैत्र कृष्णा ७ को पट्टारुढ हुए थे। ये खण्डेलवाल जाति एव सेठी गोत्र मे उत्पन्न हुए थे। सवत् १६०१ की फाल्गुन शुक्ला ९ को इन्होने चन्द्रप्रभू मर्ति की प्रतिष्ठा करायी थी।[3]

४ भट्टारक विशालकीर्ति

विशालकीर्ति[4] का पट्टाभिषेक सवत् १६०१ मे जोबनेर मे हुआ था। ये भी नागौर गादी के भट्टारक थे। जाति से खण्डेलवाल एव गौत्र पाटोदी

---

१ पाषाण की सरस्वती मुखे बुलाई। जाति ब्राह्मण पट्ट अजमेर
२ मूर्ति पच सग्रह—महावीर सवन जयपुर, पृ० स० २६४
३ भट्टारक सम्प्रदाय पृष्ठ सख्या १२१
४ सवत् १६०१ वैशाख सुदी १ विशालकीर्ति जी गृहस्थ वर्ष ९ दीक्षा वर्ष ५८ पट्ट वर्ष ९ माह १० दिवस २० अन्तर मास १ दिवस १० सर्व ७७ दिवस २३ जाति पाटौदी पट्ट जोबनेर।

था। ये १० वर्ष तक भट्टारक रहे।

५ भट्टारक लक्ष्मीचन्द्र

ये भट्टारक विशालकीर्ति के प्रमुख शिष्य थे। सवत् १६११ मे इनका भी जोबनेर मे ही पट्टाभिषेक हुआ। ये खण्डेलवाल एव छावडा गौत्र के श्रावक थे। इन्होने २० वर्ष तक भट्टारक पद पर रह कर साहित्य एव समाज की अपूर्व सेवा की थी।

६ भ. सहस्रकीर्ति

जोवनेर मे पट्टस्थ होने वाले ये तीसरे भट्टारक थे। इनके गुरु भट्टारक लक्ष्मीचन्द्र थे। सवत् १६३१ जेष्ठ सुदी ५ को इनका वडे ठाट से पट्टाभिषेक हुआ। इसके पश्चात् ये १८ वर्ष तक भट्टारक रहे। इनका गौत्र पाटनी था।

७ भट्टारक नेमिचन्द्र

जोबनेर मे ही पट्टस्थ होने वाले चौथे भट्टारक थे। अपने गुरु लक्ष्मीचन्द्र के समान ये भी खण्डेलवाल जाति के थे तथा ठोलिया इनका गौत्र था। सवत् १६५० की श्रावण शुक्ला १३ को इनका अभिषेक हुआ। ये २२ वर्ष तक भट्टारक पद पर रहे। ये साहित्य प्रेमी थे तथा अपने एव अपने शिष्यो के लिये ग्रन्थो की पाण्डुलिपिया कराया करते थे।

८ भट्टारक यशकीर्ति

ये नागौर गादी के भट्टारक थे तथा सवत् १६७२ की फाल्गुन शुक्ला ५ को इनका रेवासा नगर मे पट्टाभिषेक हुआ। एक भट्टारक पट्टावलि मे इनका परिचय निम्न प्रकार दिया "सवत् १६७२ फागुन सुदी ८ यश कीर्ति जो गृहस्थ वर्ष ९ दीक्षा वर्ष ४० पट्ट वर्ष १७ मास ९ दिवस ८ अन्तर दिवस २ सर्व वर्ण ६७ जाति पाटनी पट्ट रेवासा।"

रेवासा नगर के आदिनाथ जिन मन्दिर मे एक शिलालेख के अनुसार यशकीर्ति के उपदेश से रायसाल के मुख्य मन्त्री देवीदास के दो पुत्र जीत एव नथमल ने मन्दिर का निर्माण कराया था। इनके प्रमुख शिष्य रूपा एव डूंगरसी

ने धर्म परीक्षा की एक प्रति गुणचन्द्र को भेट देने के लिए लिखायी थी तथा रेवासा के पचो ने उन्हे एक सिंहासन भेट किया था ।[1]

९. भट्टारक भानुकीर्ति

भानुकीर्ति का पट्टाभिषेक नागौर मे ही सवत् १६६० मे ही सम्पन्न हुआ । एक पट्टावलि के अनुसार उन्होने ७वे वर्ष मे ही दीक्षा ले ली और ३७ वर्ष तक साधु जीवन मे रह कर गहरी साधना की । इसके पश्चात् १४ वर्ष तक भट्टारक पद पर रह कर जैन साहित्य एव संस्कृति का प्रचार किया । इनके द्वारा रचित रविव्रत कथा की एक पाण्डुलिपि जयपुर शास्त्र भण्डार सग्रह मे मिलती है जिसमे उन्होने अपने आपका निम्न प्रकार उल्लेख किया है

आठ सात सोला के अ ग रविदिन कथा रचियो अकलक ।
भाव सहित सत सुख लहू, भानुकीर्ति मुनिवर जो कहे ।।

उक्त कथा के अतिरिक्त इनकी वृहद सिद्धचक्रपूजा, रोहिणीव्रत कथा एव पार्श्वनाथ स्तोत्र भी राजस्थान के विभिन्न भण्डारो मे मिलती है।

१०. भट्टारक श्रीभूषण

ये भट्टारक भानुकीर्ति के शिष्य थे तथा नागौर गादी के सवत् १७०५ मे भ० बने थे । ७ वर्ष तक भ० पद पर रहने के पश्चात् इन्होने अपने शिष्य धर्मचन्द्र को भट्टारक गादी देकर एक उत्तम उदाहरण उपस्थित किया । ये खण्डेलवाल एव पाटनी गोत्र के श्रावक थे । साहित्य रचना मे इन्हे विशेष रुचि थी । इनकी कुछ रचना निम्न प्रकार है ।

१ अनन्तचतुर्दशी पूजा–सस्कृत
२ अनन्तनाथ पूजा– "
३ भक्तामर पूजा विधान "

---

[1] श्रीमद भट्टारक जी १०८ श्री यशकीर्ति जी तस्य आमनाय का श्री पचा सिहासन कराय चढाबो रेवासा नगरे स० १६७२ का मिति फालुन सुदी ५ ।

४ श्रुतस्कध पूजा सस्कृत
५ सप्तऋषि पूजा "

११. भट्टारक धर्मचन्द्र

भट्टारक धर्मचन्द्र का पट्टाभिषेक मारोठ मे सवत् १७१२ मे हुआ था। ये नागौर गादी के भट्टारक थे। एक पट्टावलि के अनुसार ६ वर्ष तक गृहस्थ रहे, २८ वर्ष तक साधु अवस्था मे रहे तथा १५ वर्ष तक भट्टारक पद पर आसीन रहे। सस्कृत एव हिन्दी दोनो के ही ये अच्छे विद्वान थे। और इन्होने सवत १७२६ मे गौतम-स्वामी चरित की रचना की थी। सस्कृत का यह एक अच्छा काव्य है। मारोठ (राजस्थान मे) इसकी रचना की गयी थी उस समय मारोठ पर रघुनाथ का राज्य था। उक्त रचना के अतिरिक्त नेमिनाथ विनती, मगीत पचासिका एव सहस्रनाम पूजा नामक कृतिया और मिलती है।

१२. देवेन्द्रकीर्ति

देवेन्द्रकीर्ति के नाम के कितने ही भट्टारक हो गये हैं। लेकिन प्रस्तुत देवेन्द्रकीर्ति नागौर के भट्टारक धर्मचन्द्र के शिष्य थे। इनका पट्टाभिषेक सवत १७२७ मे मारोठ मे सम्पन्न हुआ था। ये केवल ११ वर्ष तक ही भट्टारक पद पर रहे।

१३ भट्टारक अमरेन्द्रकीर्ति

ये भट्टारक देवेन्द्रकीर्ति के शिष्य थे तथा सवत १७३८ मे भट्टारक पद पर अभिषिक्त हुए थे। कुछ पट्टावलियो मे इनका सुरेन्द्रकीर्ति भी नाम मिलता है। ये खण्डेलवाल जाति एव पाटणी गोत्र के थे। सवत १७४० मे इनके द्वारा रचित "रविवार व्रतकथा" की प्रति मिलती है। ये भी करीब ७ वर्ष तक भट्टारक गादी पर रहे।

१४. भट्टारक रत्नकीर्ति (द्वितीय)

रत्नकीर्ति सवत १७४५ मे भट्टारक पद पर अभिषिक्त किये गये। ये कुछ समय तक नागौर गादी पर रहे लेकिन बाद मे अजमेर चले गये और वहा पर उन्होने भट्टारक गादी की स्थापना की। यह कोई सवत १७५१ की घटना

होगी। संवत् १७५१ मे कालाडेहरा मे पुन इनका पट्टाभिषेक किया गया। ये बडे प्रभावशाली भट्टारक थे। एक भट्टारक पट्टावली मे इनका परिचय निम्न प्रकार दिया गया है।

"सवत् १७४५ वैशाख सुदी ६ रत्नकीर्ति जी गृहस्थ वर्ष ३० दीक्षा वर्ष ४७ पटट् वर्ष २१ सर्व वर्ष ६८ मास १ दिवस ४ अन्तर मास १ दिवस ३ जाति गोधा पट्ट कालाडेहरा"

१५. भट्टारक विजयकीर्ति

अजमेर गादी के भट्टारको मे भ० विजयकीर्ति का नाम विशेषत उल्लेखनीय है। इनका अजमेर नगर मे संवत् १८०२ अषाढ सुदी १ के शुभ दिन पट्टाभिषेक हुआ था। इन्होने अपने गुरु भवनभूषण का चबूतरा एव चरण अजमेर मे ही स्थापित किये थे। विजयकीर्ति सस्कृत एव हिन्दी के अच्छे विद्वान थे।

अब तक इनकी निम्न रचनाये उपलब्ध हो चुकी है

१ अकलक निकलक चौपाई
२ कथा सग्रह
३ कर्णामृतपुराणक
४. चन्दनषष्ठिव्रत पूजा
५ धर्मपाल सवाद
६ महादण्डक
७ शालिभद्र चौपाई
८ श्रेणिक चरित्र

कर्णामृत पुराण की रचना रूपनगर (रूपनगढ) मे सवत् १८२६ मे सम्पन्न हुई थी जिसका कवि ने निम्न प्रकार उल्लेख किया है

सावत अठारहसौ छबीस ग्रन्थ रचित ... वीस।
कार्तिक वदि बारस गुरुवार, रूपनगर मे रच्यो सुसार ॥

श्रेणिकपुराण सवत् १८२७, शालिभद्र चौपाई सवत् १८२७ महादण्डक सवत् १८२९ की रचनाये है। महादण्डक की अन्तिम प्रशस्ति निम्न प्रकार है —

सवत् जानि प्रवीन अठारासै गुणतीस लखि
महादडक सुभ दीन, ज्येष्ठ चौथि गुरु पुष्प शुक्ल
गढ अजमेर सुथान, श्रावक सुख लीला करे ।
जैनधर्म वहुमान देव शास्त्र गुरु भक्ति मन ॥

इति श्री महादण्डक कर्णानुयोग भट्टारक श्री विजयकीर्ति लघुदण्डक वर्णन इकतालिसिया अधिकार ४१ । स १८२९ का ।

१६. भट्टारक भुवनकीर्ति

भ० भुवनकीर्ति भ० त्रिलोकेन्द्रकीर्ति के शिष्य थे। ये भी प्रभावशाली भट्टारक थे । सवत १८५२ मे अजमेर मे जो विशाल प्रतिष्ठा समारोह हुआ था वह इन्ही के निर्देशन मे सम्पन्न हुआ था । जयपुर के वडे दीवान जी के दिगम्वर जैन मन्दिर मे जो आदिनाथ एव महावीर विशाल मूर्तिया है वे अजमेर मे ही प्रतिष्ठापित है ।

शाकम्भरी क्षेत्र मे केवल भट्टारको ने ही जैन साहित्य एव संस्कृति की सेवा नही की किन्तु विद्वानो ने भी साहित्य की रचना एव उसकी सुरक्षा मे जो योगदान दिया वह अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है । इन्होने भी हिन्दी एव सस्कृत के प्रचार प्रसार मे पूरा प्रयास किया तथा शास्त्र भण्डारो मे प्रतिलिपिया करके विराजमान की । यहा ऐसे ही कुछ विद्वानो का परिचय प्रस्तुत किया जा रहा है .

१७. पं. मेधावी

मेधावी सस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान थे। १६वी शताब्दी मे होने वाले भट्टारक जिनचन्द्र के प्रमुख शिष्य थे । धर्मसग्रह श्रावकाचार इनकी प्रमुख कृति है जिसे कवि ने सवत् १५४१ मे नागौर मे समाप्त की थी । उस समय नागोर का क्षेत्र सपादलक्ष क्षेत्र के नाम से प्रसिद्ध था तथा देहली पर वादशाह फिरोजशाह का शासन था । नागौर मे चन्द्रप्रभ मन्दिर मे इस ग्रन्थ की रचना हुई थी । मेघावी प जिनदास के पुत्र थे जो स्वय भी अच्छे विद्वान थे । मेधावी ने लिखा है कि उसने धर्मसग्रह श्रावकाचार आचार्य समन्तभद्र, वसुनन्दि एव आशाधर के श्रावकचारो के अध्ययन करने के पश्चात लिखा है ।

मेधावी का प्रस्तुत श्रावकाचार अत्यधिक लोकप्रिय रचना रही है और उसकी प्रतिया राजस्थान के विभिन्न शास्त्र भण्डारो मे उपलब्ध होती है ।

१८. ब्रह्म रायमल्ल

ब्रह्म रायमल्ल हिन्दी के अच्छे विद्वान थे। जब तक इनकी १३ रचनाये प्राप्त हो चुकी है और ये सभी रचनाये हिन्दी मे निबद्ध है। ये ब्रह्मचारी थे और स्थान स्थान पर घूम कर रचनाये किया करते थे। इन स्थानो मे सागानेर, रणथम्भौर, गढ हरसेर, टोडारायसिंह, और साभर के नाम उल्लेखनीय है। इन्होने जेष्ठजिनवर कथा को स १६२५ मे साँभर मे समाप्त की थी। कथा की एक पाण्डुलिपि अजमेर के भट्टारकीय शास्त्र भण्डार के एक गुटके मे सग्रहित है।[1]

ब्रह्म रायमल्ल ने साभर क्षेत्र मे १७वी शताब्दी के प्रथम पाद मे विहार किया था। वे महाकवि तुलसीदास के पूर्वकालीन कवि थे। जब कवि अपने जीवन का अन्तिम अध्याय समाप्त कर रहे थे उस समय तुलसीदास साहित्यिक क्षेत्र मे प्रवेश करने की परिकल्पना कर रहे होगे। वे ब्रह्मचारी थे इसलिये जहा भी चतुर्मास करते अपने शिष्यो एव अनुयायियो को वर्षाकाल समाप्ति के पश्चात कोई न कोई कृति अवश्य भेट करते। उन्होने रास काव्य अधिक लिखे है। इसमे ऐसा लगता है कि वे इन्हे सगीत के माध्यम मे जन साधारण को सुनाया करते थे। कवि के समय मे चारो ओर शान्ति थी इसलिये वे राजस्थान के विभिन्न भागो मे विहार करते एव साहित्य रचना किया करते थे।

वास्तव मे ब्रह्म रायमल्ल ने साभर प्रदेश मे ही नही समूचे राजस्थान मे साहित्यिक चेतना जाग्रत की थी। इनके पश्चात् १७वी शताब्दी, १८वी एव १९वी शताब्दी मे एक के पश्चात् दूसरे कवि एव विद्वान् होते रहे और साहित्य रचना की पावन धारा मे बराबर वृद्धि होती रही। ब्रह्म रायमल्ल ने समूचे राजस्थान मे हिन्दी भाषा की रचनाओ की वृद्धि मे जो योगदान दिया वह सदा स्मरणीय रहेगा।

सपादल से विषयेति सुन्दरे, श्रिया पुरे नागपुर समस्ति तत्।
पेराजखाना नृपति प्रयाति, न्यायेन शौयेण रिपुन निहन्तिच ॥
मेधावी नामा निवसन्नह बुध पूर्णव्यधा ग्रथमिम तु कार्तिके।
चन्द्राब्धि बाणेक १५४१ मिते ऽत्र वत्सरे कृष्णे त्रयोदश्या शनिश्च शक्तित ॥

1 देखिये राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारो की ग्रन्थ सूची पचम भाग पृष्ठ सख्या ९४५

१९ छीतर ठोलिया

छीतर ठोलिया मोजमावाद के निवासी थे। हिन्दी के विद्वान् थे तथा हिन्दी मे काव्य रचना किया करते थे। कवि खण्डेलवाल जाति एव ठोलिया गोत्र के थे। उनकी एक रचना "होली की कथा" उपलब्ध हुई है जिसे कवि ने सवत् १६६० मे (१६०३ सन्) फाल्गुन शुक्ला पूर्णिमा को समाप्त की थी उस समय महाराजा मानसिंह का नगर पर शासन था तथा चारो ओर शान्ति थी।

सोलासे साठे शुभ वर्ष, फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा हर्ष
सोहे मौजावाद निवास, पूजै मन की सगली आस।
सोहे राजा मान को राज, जिही बाधी पूरबलग पाज।
सुखी सबै नगर मे लोग, दान पुण्य जानै सहु भोग।
इहि विधि कलयुग मे दिन रात, जाणे नही दु ख की जाति
छीतर ठोल्यो विनती करै, हिवडा माँहि जिनवाणी धरै।

होली कथा अभी तक अप्रकाशित है।

२० महापंडित टोडरमल

महापडित टोडरमल जी के जन्म स्थान के सम्बन्ध मे कोई उल्लेखनीय प्रमाण नहीं मिलता। यद्यपि उनका अधिकाश जीवन जयपुर मे ही व्यतीत हुआ था लेकिन वे पहिले कहा पर रहते थे यह अभी तक खोज का विषय है। अजमेर के शास्त्र भण्डार मे एक "सामुद्रिक पुरुष लक्षण" ग्रन्थ की सवत् १७९३ की पाण्डुलिपि मिली है। उसमे लिखा कि है यह ग्रन्थ शनिवार भाद्रपद शुक्ला ४ वि स. १७९३ को जोवनेर मे पडितोत्तम पडित प्रवर पडित जी श्री टोडरमल जी के पढने के लिए लिखा गया। इससे यह तो सिद्ध होता है कि जोबनेर का पडित टोडरमल जी से बहुत सम्बन्ध रहा था तथा स १७९३ मे वे पडित के पद मे ख्याति प्राप्त कर चुके थे। यह भी सभव है उनका जन्म ही जोबनेर मे हुआ हो। यद्यपि स्वय पडित जी ने इस सम्बन्ध ने कुछ नही लिखा है लेकिन जोवनेर से उनका गहरा सम्बन्ध होना अवश्य सिद्ध होता है नही तो यदि वे उस समय अन्यत्र होते तो फिर यह ग्रन्थ वहा क्यो लिखा जाता। इसके पश्चात् यह भी शका होती है कि वह ग्रन्थ फिर अजमेर के भट्टारकीय भण्डार मे कैसे चला गया। किन्तु जोवनेर भी भट्टारको का केन्द्र रहा था और नागौर गादी के चार भट्टारको का पट्टाभिषेक भी उसी नगर मे हुआ था। इसलिए हो सकता है कि पहिले टोडरमल जी का सम्पर्क इन्ही

की परम्परा के पडितो से रहा हो। कुछ भी हो यह तो अवश्य है कि पडित टोडरमल जी का साभर प्रदेश से और विशेपकर जोवनेर से अवश्य सम्वध रहा था। यह खोज का विपय है जिस पर विद्वानो का ध्यान जाना चाहिये।

२१. प० दामोदर

नागौर पट्ट के भट्टारक श्री भूपण के शिष्य एव भट्टारक धर्मचन्द्र (स १७१२) के शिष्य दामोदर सस्कृत के महान् विद्वान् थे। ये मारोठ नगर के निवासी थे। दामोदर नागौर के सन्तो के सेवा मे रहते हुए साहित्य एव सस्कृति के प्रचार प्रसार मे लगे रहते थे। इनकी अव तक जिन कृतियो की उपलब्धि हुई है उनमे चन्द्रप्रभचरित्र, व्रतकथाकोश के नाम उल्लेखनीय है।'चन्द्रप्रभचरित्र' इनकी सवसे अच्छी रचना हे। इसकी रचना भी मारोठ मे ही सम्पन्न हुई थी।

२२. दयाराम सोनी

प० दयाराम सोनी सस्कृत एव हिन्दी के अच्छे विद्वान् थे। ये नरायणा के निवासी थे तथा इनका प्रमुख कार्य गन्थो की प्रतिलिपिया करने का था। ये १८वीं शताब्दी के विद्वान् थे। राजस्थान के जैन ग्रन्थ भण्डारो मे इनके हाथ की लिखी हुई पचासो पाण्डुलिपिया उपलब्ध होती है। आचार्य महेन्द्रकीर्ति कृत पार्श्वनाथ चौपाई की प्रतिलिपि इन्होने सवत् १७६३ मे की थी। इसी तरह खूशालचन्द्र कृत यशोधर चरित्र की प्रति को सवत् १८०१ मे जैसिहपुरा देहली के मन्दिर मे समाप्त की थी। जोधराज गोदीका द्वारा निवद्ध सम्यक्त्व कौमुदी कथा को इन्होने स १७६३ मे जैसिहपुरा के मन्दिर मे लिखी थी। एक प्रशस्ति मे इन्होने अपने आपका निम्न परिचय दिया है—

भट्टारक महेन्द्रकीर्ति
|
शिष्य आचार्य नेमिचन्द्र
|
शिष्य प रूपचन्द्र
|
शिष्य प. दयाराम

सवत् १८०८ मे इन्होने जयपुर मे प० रायचन्द्र कृत "सीता चरित्र" की प्रतिलिपि की थी। कविवर नेमिचन्द्र का 'नेमिरास' जिसका दूसरा नाम हरिवशपुराण भी है, की पाण्डुलिपि भी सवत् १७६३ मे ही जैसिहपुरा मे सम्पन्न हुई थी। इस प्रशस्ति मे भी इन्होने अपने को नरायणा का वासी लिखा है। इस प्रकार दयाराम के लिखे हुए पचासो ग्रन्थ राजस्थान के विभिन्न भण्डारो मे उपलब्ध होते हैं।

२३. तेजपाल

तेजपाल अपभ्रश के कवि थे तथा मूलसघ के भट्टारक रत्नकीर्ति, भुवनकीर्ति, धर्मकीर्ति एव विशालकीर्ति की परम्परा को मानने वाले थे। कवि के बाबा रणमल साहु एव पिता ताल्हुय साहु थे। कवि ने अपभ्रंश मे वराग चरित, सम्भवनाथ चरित एव पार्श्वनाथ चरित की रचना की थी। तीनो ही खण्ड काव्य है। कवि १५वी शताब्दि के थे तथा उनकी रचनाये सवत् १५०० से १५१५ तक की मिलती हैं उससे जान पडता है कि कवि ने इन वर्षो मे साहित्य की महती सेवा की थी। तेजपाल ने हिन्दी के विकास मे महत्वपूर्ण योगदान दिया था। इनकी तीनो ही रचनायें यद्यपि अपभ्रश मे निवद्ध है लेकिन उनके आधार पर हिन्दी विकास की कहानी खोजी जा सकती है।

२४. प० जिनदास

"होलीरेणुका चरित्र" के निर्माता प जिनदास की गणना शाकम्भरी प्रदेश के प्रभावी विद्वानो मे की जाती है। ये रणथम्भौर दुर्ग के समीपस्थ नवलक्षपुर के रहने वाले थे। इनकी माता का नाम रिखश्री तथा धर्मपत्नी का नाम जिनदासी था। साभर से इनका निकट का सम्बन्ध था। जिसका उल्लेख इन्होने "होलीरेणुका चरित्र" की प्रशस्ति मे किया है। नारायणदास इनके पुत्र थे।[1] जिनदास भट्टारक धर्मचन्द्र के शिष्य थे तथा नागौर गादी से इनका विशेष सम्बन्ध था। जिनदास के पूर्वज अत्यधिक वैभव सम्पन्न थे और विभिन्न राजाओ से सम्मानित थे। पद्मावती देवी का इनके पूर्वजो को वरदान प्राप्त था इसलिए इनके पूर्वज एव वंशज सभी विद्वान एव साहित्य के परम अनुरागी थे। स्वयं प जिनदास सस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् ही नही थे किन्तु वैद्यक विद्या मे भी पारगत थे तथा अपनी विद्वत्ता एव वैद्यक विद्या से सभी को मुग्ध करते रहते थे। नागौर के भट्टारको की इन पर असीम कृपा थी

---

१ जैन ग्रन्थ प्रशस्ति सग्रह—भाग प्रथम—पृष्ठ सख्या ३३

और उन्ही के निर्देशानुसार ये जैन साहित्य एव सस्कृति के प्रचार प्रसार मे लगे रहते थे ।

२५. पं. रामलाल

प रामलाल पचेवर के निवासी थे । सस्कृत एव हिन्दी के विद्वान् थे तथा साभर मे ग्रन्थो की प्रतिलिपि करने का कार्य किया करते थे । साभर के धानमण्डी के मन्दिर मे जो शास्त्र भण्डार है उसमे इनके लिखे हुए कितने ही ग्रन्थ उपलब्ध होते है । वे खण्डेलवाल थे और इनका गोत्र पहाडिया था । इनके द्वारा प्रतिलिपि किये हुए प्रीत्यकर चरित (सवत् १८८४) भद्रबाहु चरित (१८७४) उत्तरपुराण भाषा(१८७८), पचपरमेष्ठि पूजा (१८७७) आदि कितने ही ग्रथ सग्रहीत है ।

२६. प. चैनसुखदास न्यायतीर्थ

प चैनसुखदास न्यायतीर्थ २०वी शताब्दी के सर्वाधिक लोकप्रिय विद्वान् थे । साभर प्रदेश के भादवा ग्राम मे आपका जन्म हुआ । शिक्षा दीक्षा स्याद्वाद महाविद्यालय वाराणसी मे हुई और जयपुर नगर उनका प्रमुख कार्य क्षेत्र रहा । आप ३० से भी अधिक वर्षो तक दिगम्बर जैन सस्कृत कालेज के प्राचार्य रहे । जैनबन्धु, जैन दर्शन एव वीरवाणी पत्रिका के प्रमुख सम्पादक रहे । पण्डितजी सा दर्शन एव सिद्धात के प्रमुख विद्वान् थे । जैनदर्शनसार, पावन प्रवाह, 'षोडशकारण भावना' आपकी प्रमुख रचनाये हे । पण्डितजी सा हिन्दी के कवि भी थे । आपकी कविताओ का सग्रह 'दार्शनिक के गीत' मे प्रकाशित हो चुका है ।

प चैनसुखदासजी सामाजिक आँदोलनो मे विशेष रुचि लेते थे । समाज के कितने ही आन्दोलनो के आप सूत्रधार रहे थे और समाज मे से अनेक कुरीतियो के उन्मूलन मे आपका विशेष योगदान रहा है । समाज मे ऐसी कोई सस्था नही जिसको आपका मार्गदर्शन नही मिला हो । राजस्थान मे आज जितने भी विद्वान् है उनमे से अधिकाश आपके ही शिष्य है । आपके प्रमुख शिष्यो मे लेखक डा कस्तूरचन्द कासलीवाल, प भवरलाल न्यायतीर्थ, प मिलापचन्द्र शास्त्री, अनूपचन्द न्यायतीर्थ, सुरज्ञानी चन्द न्यायतीर्थ, प सत्यधर कुमार सेठी के नाम विशेषत उल्लेखनीय है ।

शास्त्र भण्डार

शास्त्र भण्डारो की दृष्टि से शाकम्भरी प्रदेश राजस्थान का महत्त्वपूर्ण क्षेत्र रहा है । यहा पर विहार करने वाले भट्टारको, मुनियो, ब्रह्मचारियो ने ग्रन्थो के लेखन पर विशेष ध्यान दिया और शास्त्र भण्डारो की गाव गाव मे स्थापना की । शाकम्भरी पदेश मे अजमेर, नागौर, साभर, नरायणा, मोजमाबाद, दूदू, किशनगढ

जैसे नगरो मे शास्त्र भण्डार अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हैं। इन शास्त्र भण्डारो के द्वारा साहित्य की जितनी सुरक्षा हो सकी वह इतिहास मे स्वर्णाक्षरो मे लिखे जाने योग्य है। इन भण्डारो मे सस्कृत, प्राकृत, अपभ्र श, हिन्दी एव राजस्थानी भाषा की सैकडो ही नही हजारो पाडुलिपिया है जिनमे अधिकाशत अप्रकाशित है। प्रदेश के कुछ प्रमुख भण्डारो का यहा परिचय दिया जा रहा है

१ भट्टारकीय शास्त्र भण्डार अजमेर
२ भट्टारकीय शास्त्र भण्डार नागौर
३ शास्त्र भण्डार दि. जैन मन्दिर मोजमाबाद
४ शास्त्र भण्डार दि जैन मन्दिर नरायणा
५ शास्त्र भण्डार दि. जैन मन्दिर साभर
६ दि जैन शास्त्र भण्डार, दूदू।

१. भट्टारकीय शास्त्र भण्डार अजमेर

अजमेर का भट्टारकीय शास्त्र भण्डार राजस्थान के प्रसिद्ध एवं महत्त्वपूर्ण शास्त्र भण्डारो मे से है। बडे बडे के मन्दिर मे स्थापित होने के कारण इसे दि जैन मन्दिर बडा धडा का शास्त्र भण्डार भी कहा जाता है। यह मन्दिर एक दीर्घकाल तक भट्टारको का केन्द्र रहा। भट्टारक विजयकीर्ति तक यह भण्डार साहित्यिक गतिविधियो का केन्द्र माना जाता रहा। वर्तमान मे इस भण्डार मे हस्तलिखित ग्रन्थो की सख्या २५०० के करीब है। स्वय लेखक ने दिसम्बर ५८ मे २०१५ ग्रन्थो का एक सूची-पत्र तैयार किया था। यहा प्रमुखत सस्कृत, प्राकृत, अपभ्र श हिन्दी एव राजस्थानी भाषा के ग्रन्थ है। जो पुराण, काव्य, चरित्र, कथा आदि से सम्बन्धित है। आयुर्वेद से सम्बन्धित पचासो ग्रन्थ इस शास्त्र भण्डार मे उपलब्ध होते है। शास्त्र भण्डार की स्थापना १३वी शताब्दी के पूर्व ही हो गई थी लेकिन भण्डार मे सवत् १४६३ से पूर्व की कोई पाण्डुलिपि नही मिलती। इस भण्डार मे महापण्डित आशाधर की "अध्यात्म रहस्य" की एक मात्र पाण्डुलिपि सुरक्षित है। इसके अतिरिक्त आत्मानुशासन टीका (प्रभाचन्द्राचार्य) हरिवशपुराण (ब्र जिनदास) सागारधर्मामृत(आशाधर) धर्मपरीक्षा (अमितिगति) सुकुमालचरित (भ सकलकीर्ति) की भी प्राचीनतम पाण्डुलिपिया उपलब्ध होती हैं। हिन्दी की कितनी ही ऐसी रचनायें हैं जो साहित्यिक दृष्टि से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हैं। कविवर भगवतीदास की हिन्दी रचनाये एक गुटके में सग्रहीत है जिनका प्रकाशन होना आवश्यक है। इनके अतिरिक्त "अर्गलपुर जिनवन्दना" एव राजावलि दोनो ही ऐतिहासिक कृतिया हैं। ठाकुर कवि का शान्तिपुराण (स १६५२), घेल्ह कवि का बुद्धिप्रकाश, बूचराज का भुवनकीर्ति गीत एव

धर्मकीर्ति गीत इतिहास की दृष्टि से अच्छी रचनाये है। इसी भण्डार में सवत् १७९३ में लिखा हुआ "सामुद्रिक पुरुष लक्षण" ग्रन्थ सग्रहीत है जिसकी प्रतिलिपि महापण्डित टोडरमल जी के पठनार्थ की गई थी। इस प्रति के आधार पर टोडरमलजी की आयु के सम्बन्ध मे अब तक की धारणाये वदलने मे योग मिला है।

इस भण्डार को विकसित करने मे भट्टारक विजयकीर्ति का सम्भवत सर्वाधिक योग रहा क्योकि वे स्वय भी विद्वान् थे और उनका इस ओर विशेष ध्यान था। लेकिन गत २०० वर्षो मे भण्डार की व्यवस्था मे कोई सुधार नही हुआ इसलिये एक वोरी भरे हुए ग्रन्थ अस्त व्यस्त हुए पडे हुए है यदि इनका शोधन किया जावे तो सम्भवत पचासो ग्रन्थ तैयार हो सकते है।

अजमेर मे यद्यपि और भी मन्दिरो मे शास्त्र भण्डार है लेकिन सर सेठ भागचन्द जी सोनी के मन्दिर मे ग्रन्थो की अच्छी सख्या है और उसमे कितने ही ग्रन्थ महत्त्वपूर्ण हो सकते है। अभी तक उनका सूचीकरण नही हो सका है लेकिन उसकी वहुत आवश्यकता है।

२. भट्टारकीय शास्त्र भण्डार नागौर

हस्तलिखित ग्रन्थो के सग्रह की दृष्टि से नागौर का भट्टारकीय शास्त्र भण्डार राजस्थान मे सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। यहा करीव १४ हजार पाण्डुलिपियो का सग्रह है जिनमे से दो हजार से अधिक गुटके है जिनमे एक मे ही वीसो पच्चीसो लघु ग्रन्थो का सग्रह रहता है। भण्डार मे मुख्यत अपभ्र श, प्राकृत एव सस्कृत कृतियो का सर्वाधिक सग्रह है। अधिकाश पाण्डुलिपिया १४वी शताब्दि से लेकर १९वी शताब्दि तक की है जिससे पता चलता है कि गत १५० वर्षो में यहा ग्रन्थ सग्रह की ओर कोई ध्यान नही दिया गया। सवसे अधिक पाण्डुलिपियाँ १६वी, १७ वी एव १८वी शताब्दियो की जो यहा की साहित्यिक गतिविधियो की और सकेत करती है। यहा के भट्टारक वडे धाकड एव विद्वान हुए है। इसलिये श्रावको की प्रेरणा से यहा ग्रन्थो के लेखन का कार्य वरावर होता रहता था। प्राकृत भाषा के ग्रन्थो मे आचार्य कुन्दकुन्द के समयसार की यहा सन् १३०३ की पाण्डुलिपि है इसी तरह मूलाचार की सन् १३३८ की पाण्डुलिपि है जो अब तक उपलब्ध पाण्डुलिपियो मे सर्वाधिक प्राचीन है। इसी तरह अपभ्र श का यहा विशाल साहित्य मिलता है। कुछ अन्यत्र अनुपलब्ध ग्रन्थो मे वरागचरित (तेजपाल) सम्यक्त्व कोमुदी (हरिसिंह) ठोमिणाहचरिउ (दामोदर) - के नाम उल्लेखनीय है। सस्कृत एव हिन्दी की भी इसी तरह यहा सैकडो पाण्डुलिपिया है जनका अन्यत्र मिलना दुर्लभ सा है। ऐसी रचनाओ मे जगरूप कवि का जगरूप

विलास, कल्ह की कृपरण पच्चीसी, मडलाचार्य श्रीभूषरण का "सरस्वती-लक्ष्मी सवाद" सुखदेव का क्रियाकोश, मानसागर की "विक्रमसेन चौपाई" के नाम उल्लेखनीय है।

इस शास्त्र भण्डार मे भट्टारको के जीवन पर हिन्दी मे पर्याप्त सामग्री सग्रहीत है जिसके आधार पर उनकी साहित्यिक एव सांस्कृतिक गतिविधियो पर अच्छा प्रकाश पडता है। ऐसी कृतियो मे गीतात्मक कृतिया सबसे अधिक है जो भट्टारको की प्रशसा मे लिखी गयी हैं इनमे निम्न गीतो के नाम उल्लेखनीय है

१ नेमिचन्द्र गीत
२ विशालकीर्ति गीत
३ सहस्रकीर्ति गीत
४ श्रीभूषरण गीत
५ धर्मकीर्ति गीत
६ गुणचन्द्र गीत

इस भण्डार का अभी तक पूर्ण रूप से सूचीकरण नही हुआ है जिसकी बहुत आवश्यकता है।

३. दिगम्बर जैन शास्त्र भण्डार मोजमाबाद

१७वी शताब्दि मे मोजमाबाद साहित्यिक गतिविधियो का प्रमुख केन्द्र रहा। सवत् १६६४ मे महाराजा मानसिह के अमात्य नानू गोधा ने एक बडी भारी प्रतिष्ठा का आयोजन किया। इसके चार वर्ष पूर्व छीतर ठोलिया ने यहा होली की कथा की रचना की थी। सन् १५३८ मे धनपाल कवि के "भविसयत्तकहा" की यह। प्रतिलिपि हुई जो आमेर शास्त्र भण्डार जयपुर मे सग्रहीत है। "वसुनन्दि श्रावकाचार" की पाण्डुलिपि जयपुर के बधीचन्द जी के शास्त्र भण्डार मे सुरक्षित है इसकी यहा सवत् १६३० मे प्रतिलिपि हुई थी। संवत् १६६० साहित्यिक गतिविधियो का प्रमुख केन्द्र रहा जिसमे भट्टारक सकलकीर्ति एव ज्ञानकीर्ति के यशोधरचरित्र की पाण्डुलिपिया तैयार करके राजस्थान के विविध भण्डारो में सग्रहीत की गयी।

यहा का शास्त्र भण्डार मन्दिर के ही एक भाग मे है। इसमे हस्तलिखित ग्रन्थो की सख्या ३६८ है। वैसे ग्रन्थ भण्डार की हालत अच्छी नही है और बहुत से ग्रन्थ श्रावको एव व्यवस्थापको की इस ओर उदासीनता के कारण नष्ट हो गये। यहा यशोधरचरित्र की दो सचित्र पाण्डुलिपिया भी हैं जिनमे एक

पूर्ण तथा दूसरी अपूर्ण है। प्रवचनसार (आचार्य कुन्दकुन्द) जिनेन्द्र व्याकरण, "पट्कर्मोपदेश रत्नमाला' (अमरकीर्ति) 'त्रिपष्टि स्मृति शास्त्र' (आशाधर) योगसार (अमितिगति) तत्वार्थसूत्र टिप्पण (योगदेव) आदिनाथपुराण टिप्पण (प्रभाचन्द्र) जैसे कुछ ग्रन्थ अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। यहा लाखा चारण टीका वाली "कृष्ण रुक्मिणी वेलि" की पाण्डुलिपि भी है जो अन्यत्र नही मिलती।

४. शास्त्र भण्डार दिगम्बर जैन मन्दिर नरायणा

नरायणा के शास्त्र भण्डार का अभी तक राजस्थान के शास्त्र भण्डारो की ग्रन्थ सूची के किसी भी भाग मे परिचय नही आया है। इस भण्डार को लेखक ने एव प अनूपचन्द्र जी ने दिनाक २०–९–१९७१ को देखा था। नगर की प्राचीनता एव जैन सस्कृति का केन्द्र रहने पर भी यहा के शास्त्र भण्डार मे हस्तलिखित ग्रन्थो की सख्या ५१ है जिसमे वडे मन्दिर मे ३६ तथा छोटे मन्दिर मे १५ ग्रन्थ है। यद्यपि अधिकाश पाण्डुलिपिया हिन्दी की लेकिन सस्कृत एव प्राकृत के भी कुछ ग्रन्थ हैं। एक ग्रन्थ कन्नड भाषा का है। शास्त्र भण्डार मे जो प्रमुख पाण्डुलिपिया है उनका परिचय इस प्रकार है ·

१. पचकल्याणक पूजा—

पन्नालाल साघी की यह कृति है जिसे सवत् १९२१ जेष्ठ शुक्ला २ को निबद्ध की गयी थी। पन्नालाल राव जीवनसिंह का मन्त्री था। कवि ने अपना परिचय निम्न प्रकार दिया है

नृपति राम को मत्री जानि, जीवनसिंह सुराव महान।
सेवक सगही पन्नालाल, पूजन रच्यो गुणन को माल
एक ऊन विशति शतक एक वीस सव जान
ज्येष्ठ शुक्ल पचमि दिना पूरन पचकल्याण ॥५९॥

२ सुक्तिमुक्तावलि भाषा—

सुक्तिमुक्तावली सस्कृत की लोकप्रिय कृति है। जिसके कर्त्ता सोमप्रभाचार्य है। अव तक इस पर कितने ही विद्वानो की भाषा एव सस्कृत टीकायें प्राप्त हुई है। महाकवि बनारसीदास ने इस पर सवसे सुन्दर हिन्दी पद्यानुवाद किया हे जो सिन्दूर प्रकरण के नाम से अधिक प्रसिद्ध है। नरायणा के शास्त्र भण्डार मे सुन्दरदास कृत भाषाटीका की प्रति उपलब्ध होती है। इनकी एक एक प्रति अलवर एव बूदी के शास्त्र भण्डार मे भी लेखक को मिल चुकी है। सुन्दरदास ने इसकी सवत् १५६६ मे रचना समाप्त की थी। कवि लमेचू जाति मे उत्पन्न हुए थे तथा भदावर क्षेत्र के अटेर ग्राम के ये रहने वाले थे। इनके पिता का नाम अमरसिंह था।

ये तीन भाई थे जिनमे बीच के सुन्दरलाल थे। आजीविका उपार्जन के लिए ये वहा से मालवा के प्रमुख नगर इन्दौर मे आ गये। वहाँ ६ जिन मन्दिर थे तथा एक शैली भी थी। शैली मे आने वाले श्रावको के आग्रह से ही कवि ने सूक्तिमुक्तावली की भाषा टीका लिखी थी।

अब कछु भाषा होने के लिख्यो भाव विधि जोग।
देस भदावर नगर सुभ, नाम अटेर मनोग ।।४।।
तहा श्रावक बहुत बसै, जाति लमेचू जानि।
अमरसिंह तसु तीन सुत बिचलो सुन्दर भानि ।।५।।
कर्म विहायो गति उदै, ग्रहतै निकसे सोय।
आइ वसे मालव बिसे इन्द्रावति पुर जोय ।।६।।
जहा वे सैलि देख के, हिय मे हर्ष मनाय।
षट मन्दिर जिनराज के, जब उद्योत लखाय ।।७।।
ग्रन्थ सूक्तिमुक्तावली, देखि हियो उमगाय।
करी वचनिका तास की बालबोध सुखदाय ।।८।।
ता पाछै पण्डित सही, धनजीमल इह आय।
तिनने बहु प्रेरन करी करो वचनिका जाहि ।।९।।
तब हमने भाषा करी आतम बुद्धि हम जानि।
पण्डित मति हसियो मुझे मो परितीति सुठानि ।।१०।।
रस युग सर शशि सवत सुमास चर।
जेठ कृष्ण दोजि वार सरगुरु मानिये ।।
दिवस सुमास दोय गये ग्रन्थ पूरो होय।
ताही को अभ्यास करै साधर्मी जानिये ।।

३ समवसरण पूजा—

सघी पन्नालाल। यह बडी पूजा है तथा कवि ने इसे सवत् १९२१ मे समाप्त की थी। पूजा विस्तृत है तथा समाज मे लोकप्रिय है। कवि ने पूजा के अन्त मे अपना विस्तृत परिचय दिया है। इनके गुरु का नाम सदासुख था। नेमिचन्द्र बख्शी के पुत्र जवाहरलाल के आग्रह से कवि ने उक्त ग्रन्थ की रचना की थी।

४ गिरनार क्षेत्र पूजा—

यह हजारीमल्ल की कृति है। जिसे उन्होने सवत् १९२५ आसोज बुदी १२ के दिन निबद्ध की थी। इनके पिता का नाम हरिकिशन था। अपने पिता के साथ ये भी

लश्कर चले गये और वहा से शाहपुर आ गये। कवि अग्रवाल जैन थे तथा गोयल इनका गोत्र था।

५. शास्त्र भण्डार दिगम्बर जैन मन्दिर सांभर

साभर नगर का परिचय पहिले दिया जा चुका है। यहा के भण्डार का भी अभी तक परिचय नही छपा है। साभर मे शास्त्र भण्डार धानमडी के दिगम्बर जैन मन्दिर मे उपलब्ध है। जिसमे हस्तलिखित ग्रन्थो की सख्या ८६ हे। हिन्दी भाषा के ग्रन्थो की सख्या सवसे अधिक है। भण्डार मे प्राचीनतम पाँडुलिपि अखयराज श्रीमाल के चौदह गुणस्थान' स्वरूप की है जो सवत् १७४१ की है। साभर मे लिखे गये ग्रन्थो की सख्या भी अच्छी हे। इन ग्रन्थो मे कुछ ग्रन्थ निम्न प्रकार हैं —

				लेखन काल
१	भद्रबाहु–चरित्र	किशनसिंह	हिन्दी	संवत् १८७९
२	प्रीत्यकर चरित्र	जोधराज गोदीका	"	१८८४
३.	रत्नत्रयपूजा	—	"	१९०७
४	उत्तरपुराण भाषा	खुशालचन्द	"	१८७८
५	प्रश्नोत्तर श्रावकाचार	बुलाकीदास	"	१८५२
६.	पचपरमेष्ठी पूजा	—	"	१८७७
७.	समयसार नाटक	वनारसीदास	"	१८७९
८.	मिथ्यात्वनिषेध	द्यानतराय	"	१९२७
९	ब्रह्मविलास	भगवतीदास	"	१८८२
१०	आत्मानुशासन भाषा	टोडरमल	"	१८७८

साभर मे प रामलाल अच्छे लिपिकार हुए हैं जिनकी लिखी हुए १५ से भी अधिक पाडुलिपिया इस भण्डार मे सग्रहीत है। यहा द्यानतराय के चरचा शतक की वहुत सुन्दर पाडुलिपि है जो टव्वा टीका सहित है। भण्डार मे सबसे अधिक पाण्डुलिपि सवत् १८५० से १८८५ तक की है जिससे पता चलता है कि इन वर्षों मे साभर मे साहित्य के प्रति श्रावको मे सर्वाधिक जाग्रति रही।

६. शास्त्र भण्डार दिगम्बर जैन मन्दिर दूदू

शाकम्भरी प्रदेश मे दूदू का उल्लेखनीय स्थान है। जयपुर से अजमेर जाने वाली मुख्य सडक पर दूदू ग्राम है जो दोनो नगरो के मध्य मे स्थित हे। दूदू को भट्टारको का केन्द्र स्थान रहने का सौभाग्य प्राप्त् था। जयपुर के एक मन्दिर मे आचार्य गुणचन्द्र ने वन्यकुमार ग्रन्थ की पाण्डुलिपि है जिसकी प्रतिलिपि इसी ग्राम मे

की गयी थी । इस समय इस नगर पर घडसीराय का राज्य होना लिखा है । यहा के दिगम्बर जैन मन्दिर मे शास्त्र भण्डार मे १०० से भी अधिक ग्रन्थ है । जिनमे हिन्दी एव सस्कृत मे सर्वाधिक पाण्डुलिपिया है । भण्डार की अभी तक पूरी छानबीन नही की जा सकी है ।

अपभ्रंश काव्य

१ पासणाहचरिउ

यह कविवर तेजपाल की रचना है । रचना अपभ्रंश भाषा की है तथा इसका रचना काल सवत् १५१५ कार्तिक कृष्णा पचमी है । यह एक खण्डकाव्य है जिसका अपभ्रंश का लाडला छन्द पद्धडिया है । पासणाहचरिउ में २३वें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ के जीवन का तीन सधियो में वर्णन किया गया है । इस काव्य को कवि ने यदुवशी साहु शिवदास के पुत्र घूवलि साहु की अनुमति से रचा था । ये मुनि पद्मनन्दि के शिष्य थे । इस काव्य की एक पाण्डुलिपि अजमेर के शास्त्र भण्डार मे सग्रहीत है ।

२. सभवणाहचरिउ

यह भी कविवर तेजपाल की कृति है । इसका रचना काल सवत् १५०० के आस पास का है । इसमे तीसरे तीर्थ कर के जीवन पर प्रकाश डाला गया है । अपभ्रंश मे सभवनाथ पर यह एक मात्र कृति उपलब्ध होती है । इसकी रचना श्रीप्रभ नगर मे हुई थी तथा जिसे अग्रवाल जाति के मित्तल गोत्रीय साहु लखमदेव के चतुर्थ पुत्र थील्हा के अनुरोध पर लिखी गयी थी । रचना अत्यधिक साधारण है ।

३. वरागचरिउ

यह भी तेजपाल की तीसरी कृति है जिसकी एक प्रति करोली के शास्त्र भण्डार मे उपलब्ध होती है । इसमे चार सधिया हैं । जिनमे राजा वरांग का जीवन निबद्ध है । इसका रचनाकाल सवत् १५०७ की वैशाख शुक्ला सप्तमी है । रचना साधारण है तथा हिन्दी के विकास पर प्रकाश डालने वाली है ।

४. होलीरेणुकाचरिउ

यह पडित जिनदास की कृति है जिसमे होली की कथा को संस्कृत भाषा मे निबद्ध की थी । इस कृति का रचना काल सवत १६०८ की जेष्ठ शुक्ला दशमी

---

१ जैन ग्रन्थ प्रशस्ति संग्रह-सम्पादक पं० परमानन्द शास्त्री पृ० सं० ८७ (प्रस्तावना)

है। इस कृति का रचना स्थान शेरपुर का शान्तिनाथ चैत्यालय है। इसकी प्रशस्ति मे लिखा है कि पद्म श्रेष्टि ने शाकम्भरी मे एक विशाल जिन मन्दिर का निर्माण करवाया था। यह ८४३ श्लोको वाली रचना है। तथा इसकी पाण्डुलिपिया राजस्थान के ग्रन्थ भण्डारो मे उपलब्ध होती है।

कवि ने अपनी विस्तृत प्रशस्ति मे पद्म श्रेष्टि का अच्छा परिचय दिया है जिसके अनुसार पद्म श्रेष्टि ग्यासशाह नामक राजा से पर्याप्त सम्मान प्राप्त किया था तथा वे इतने प्रभावशाली थे कि उनके आज्ञा का किया भी राजा ने उल्लघंन नही किया। इनके एक पुत्र वीभा था जो भट्टारक जिनचन्द्र के पट्ट पर प्रतिष्ठित हुआ और उसका नाम प्रभाचन्द्र रखा गया।[1]

५. गोतमस्वामी चरित्र[2]

यह भटटारक धर्मचन्द्र की कृति है जिसे उन्होने सन् १६६६ मे ज्येष्ठ सुदी २ के शुभ दिन मारोठ नगर मे निवद्ध की थी। यह एक प्रवन्ध काव्य है जिसमे भगवान महावीर के प्रथम गणधर गौतम स्वामी के जीवन पर प्रकाश डाला गया है। सस्कृत भाषा मे निवद्ध यह काव्य सुन्दर एवं काव्य गुणो से अलकृत है। गौतम स्वामी चरित्र लोकप्रिय कृति रही है और इसकी जयपुर के शास्त्र भण्डारो मे अच्छी सख्या मे पाण्डुलिपिया उपलब्ध होती है। रचना अभी तक अप्र—काशित है।

६ चन्द्रप्रभ चरित्र

यह् पडित दामोदर की कृति है जो भट्टारक धर्मचन्द्र के शिष्य थे। यह एक प्रवन्ध काव्य है जिसमे आठवे तीर्थ कर चन्द्रप्रभ का जीवन चरित्र निवद्ध है। पूरा काव्य ९ सर्गों मे विभक्त है। प्रारम्भ में कवि ने तीर्थ करो का स्तवन किया है और अन्त में काव्य की प्रशास्ति में अपना परिचय दिया है। जिसमे लिखा है कि काव्य को उसने मारोठ नगर के आदिनाथ, चैत्यालय मे छन्दोवद्ध किया था।[3] रचना अभी तक अप्रकाशित है।

---

१ जैन ग्रन्थ प्रशस्ति सग्रह प्रथम भाग

२ राजस्थान के जैन ग्रन्थ भण्डारो की ग्रन्थ-सूची चतुर्थ भाग पृ० स० १६३

३ भूभृन्नेत्राचल शशधराक पक्षे (१७२७)
वर्षेऽतीते नवमिदिनसे मासि भाद्रे सुयोगे
रम्ये ग्रामे विरचितमिद श्रीमहाराष्ट्र-नाम्नि
नात्रेयस्य प्रवरभवने भूरिशोभा निवासे।

७. धर्मसंग्रह श्रावकाचार

यह पडित मेधावी की कृति हे जो भट्टारक जिनचन्द के प्रमुख शिष्य थे। यह सवत् १५४१ की रचना है जिसका रचना स्थल नागौर का चन्द्रप्रभ चैत्यालय हैं। रचना मे श्रावक धर्म का विस्तृत वर्णन किया गया हे। इसमे दश अधिकार हैं और अन्तिम अधिकार की प्रशस्ति निम्न प्रकार समाप्त होती है .

इति सूरि श्री जिनचन्द्रान्तेवासिना पडित मेधाविना श्री धर्मसग्रहे सल्लेखना स्वरूप कथन श्रेणिकराजस्य गृह प्रवेशन दशमोधिकार

रचनाकार ने अपने ग्रन्थ के अन्त मे विस्तृत प्रशस्ति दी है जिसमे भट्टारक पद्मनन्दि, भ० शुभचन्द्र, भ० जिनचन्द्र, रत्नकीर्ति, विमलकीर्ति आदि की विद्वत्ता का परिचय दिया गया है। अपनी विस्तृत प्रशस्ति मे कवि ने यह भी लिखा है कि जो इस ग्रन्थ का व्याख्यान करेगा, वाचन करेगा, सुनेगा तथा जो विद्वान इसे पढेगा एव पढायेगा या जो इसे स्वय लिखेगा या दूसरो से लिखायेगा उसे अपूर्व पुण्य की प्राप्ति होगी।

व्यारयाति वाचयति शास्त्रमिद श्रृणोति
विद्वाश्च य पठति पाठयतेऽनुरागात।
अन्येन लेखयति व लिखति प्रदत्ते
सस्याल्लघु श्रुतधरस्य सहस्रकीर्ति ॥३४॥

धर्मसग्रह श्रावकाचार को सवत् १५४८ की एक प्राचीनतम प्रति महावीर भवन जयपुर के सग्रह मे उपलब्ध है। राजस्थान के अन्य भण्डारो मे भी इस ग्रन्थ की प्रति मिलती है।

८. ज्येष्ठ जिनवर कथा

यह हिन्दी रचना है जिनके रचनाकार ब्रह्म रायमल्ल हैं। इसमे आदिनाथ स्वामी की कथा दी हुई है। रचना मे केवल ४ पत्र हैं। इसका रचनाकाल सवत् १६२५ है इसकी एक पाण्डुलिपि अजमेर के भट्टारकीय शास्त्र भण्डार के एक गुटके मे पृष्ठ २७१ से २७४ तक सग्रहीत है। रचना सामान्य है।

९. चतुर्दशी चौपाई

यह कवि टीकम की रचना हे जिसे उसने जोबनेर के समीप्य ही कालख नामक ग्राम मे छन्दोवद्ध की थी यह एक कथा कृति है जिसमे चौदह के व्रत की कथा दी हुई हे। चौपाई का रचनाकाल सवत् १७१२ फाल्गुन की तेरस है।

कालख पर उस समय भोजराज का शासन था। वहा सुखमल साह ये जिन पर राज्य शासन का भार था उन्ही के अनुरोध पर कवि ने चौबीसी के मन्दिर मे बैठ कर इसकी रचना की थी।

सतरहसै बारहत्तरे फागुण तेरसि जाणि
वो छो अधिको शुद्ध करि, पडित कहै बखाणि
बुद्धि सास टीकम कहे कालख माहै वास
पडित होइ छोटो बडो, हू सवही को दास ।।२।।
भोजराज को राज है दादी भयो खगार
घणौ भार दे थापियो सुखमल साह हुजदार
चौईसी कै देहुरै बैठे श्रावक आय
राति दिवस चरचा करै, वन्दे जिनवर पाय ।।४।।

१० होली की कथा

यह छीतर ठोलिया की कथा कृति है। जिसे उसने मोजमाबाद मे सवत् १६६० फाल्गुन शुक्ला पूर्णिमा के शुभ दिन समाप्त की थी। रचना छोटी है तथा उसमे १०१ पद्य है। मोजमाबाद उस समय आमेर के राजा मानसिह के शासन मे था। रचना की एक पाण्डुलिपि महावीर भवन जयपुर मे सग्रहीत है तथा यह अभी तक अप्रकाशित है।

तृतीय अध्याय

शाकम्भरी प्रदेश पुरातत्व की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण प्रदेश माना जाता है। साभर, नरायणा, मोजमाबाद, नागौर, अजमेर आदि नगरो एव ग्रामो के मन्दिर एव उनमे प्रतिष्ठापित मूर्तिया पुरातत्व एव स्थापत्य कला की दृष्टि से उल्लेखनीय है। नरायणा मे अभी कुछ समय पूर्व जो जैन मूर्तिया प्राप्त हुई थी वे अत्यधिक प्राचीन ही नही किन्तु कला की दृष्टि से भी उल्लेखनीय हैं। लाल पाषाण से निर्मित ये सभी मूर्तिया ११वी १२वी शताब्दि की है और पुरातत्व की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण भी है। मोजमाबाद के मैहरो मे प्रतिष्ठापित श्री आदिनाथ एव अन्य तीर्थ करो की प्रतिमाये कला की दृष्टि मे सर्वथा महत्त्वपूर्ण हैं। साभर, मारोठ, नागौर एव जोबनेर के मन्दिरो मे प्रतिष्ठित मूर्तिया प्राचीन एव मनोज्ञ तो है ही साथ मे मूर्ति कला के इतिहास पर भी विशेष प्रकाश डालने वाली हैं। इन मूर्तियो पर जो लेख अ कित है वे सब जैनधर्म एव सास्कृति के उज्वल पक्ष पर बहुमूल्य सामग्री प्रस्तुत करती है। वास्तव मे अभी तक इस प्रदेश के जैन मन्दिरो, उनमे प्रतिष्ठित मूर्तियो तथा वहाँ प्राप्त लेखो का अध्ययन नही किया गया है और इस अध्ययन के अभाव मे भारतीय सास्कृति एव विशेषत जैन सास्कृति का इतिहास प्रस्तुत ही नही हो सका है। इस अध्याय मे हम इस प्रदेश के कुछ प्रमुख मन्दिरो एव उनमे प्रतिष्ठित मूर्तियो के सम्बन्ध मे प्रकाश डालेगे।

१. सांभर के दिगम्बर जैन मन्दिर

साभर मे ~~तीन~~ चार दिगम्बर जैन मन्दिर हैं। इनमे समुद्र का जैन मन्दिर सबसे प्राचीन है। झील के किनारे पर स्थित होने के कारण इसे समुद्र का मन्दिर कहा जाता है। मन्दिर मे सवत् १४१४ की पाच बालयति की धातु की प्रतिमा सबसे प्राचीन है। जिसे सा कोवत एव उनके पुत्र वाछत घालण ने प्रतिष्ठापित करायी थी। एक धातु की तीर्थ कर नाम की प्रतिमा है जो सवत् १५३५ की है रखा जिसे भट्टारक भुवनकीर्ति के शिष्य भट्टारक ज्ञानभूषण के उपदेश से प्रतिष्ठापित की गयी थी। इसी तरह एक पार्श्वनाथ की अन्य मूर्ति भट्टारक शुभचन्द्र के उपदेश से

प्रतिष्ठित हुई थी। इनके अतिरिक्त सवत् १४६४, १५३१, १७६३, १८५६, १८६१ आदि विभिन्न सवतो वाली मूर्तिया भी विराजमान है। यहा का दिगम्बर जैन बडा मन्दिर आजकल दिगम्बर जैन समाज की गतिविधियो का प्रमुख मन्दिर है। इसमे सवत् १३३० की एक धातु की प्रतिमा है जिसकी प्रतिष्ठा आचार्य पद्मसेन द्वारा की गयी थी। सवत् १५०९ माघ शुक्ला पचमी के शुभ दिन प्रतिष्ठित पार्श्वनाथ की मूलनायक प्रतिमा है जिसे भट्टारक जिनचन्द के उपदेश से प्रतिष्ठित की गयी थी। यहा के तीसरे मन्दिर का नाम मण्डी का मन्दिर है जिसमे सवत् १५०९ की भट्टारक हेमेन्द्रकीर्ति द्वारा प्रतिष्ठापित एक शान्तिनाथ की प्रतिमा है। यह मूर्ति अग्रवाल जैन श्रावक जल्हा, अजमल, हीगा पीथा, गुणा आदि ने प्रतिष्ठापित करवायी थी। सवत् १६४१ फाल्गुन बुदी ९ की प्रतिमा मडलाचार्य चन्द्रकीर्ति द्वारा प्रतिष्ठापित है। ये चन्द्रकीर्ति वे ही है जिन्होने सवत् १६६४ मे मोजमाबाद मे विशाल प्रतिष्ठा सम्पन्न करायी थी। सवत् १६९३ की नेमिनाथ की मूर्ति काष्ठासघ के भट्टारक द्वारा प्रतिष्ठित है तथा सवत् १७४१ की मूर्ति आमेर के भट्टारक जगकीर्ति द्वारा प्रतिष्ठापित है। यह प्रतिष्ठा टोडा (टोडारायसिंह) मे सम्पन्न हुई थी। नवीनतम प्रतिष्ठित मूर्तियो मे लूणियावास मे प्रतिष्ठित मूर्तिया हैं।

२. नरायणा के दिगम्बर जैन मन्दिर

नरायणा तीर्थभूमि मे दो दिगम्बर जैन मन्दिर है तथा दोनो मे ही प्राचीनतम एव कलापूर्ण प्रतिमाए मिलती है। यहा के बडे मन्दिर मे मूर्तिया एव यन्त्रो की सख्या ५९ है। निज मन्दिर की फेरी मे चन्द्रप्रभ स्वामी की श्वेतपाषाण की मनोज्ञ मूर्ति है। जो १३वी शताब्दि की है।[1] इस मूर्ति की प्रतिष्ठा इसी नरायणा मे हुई थी। चन्द्रमा का चिन्ह चरणो के पास बना हुआ है। हाथो के नीचे दो इन्द्र झुके हुए खडे है। सिर पर चोटी सहित बाल हैं।

इसी फेरी मे ४०"×१४" साइज की श्वेतपाषाण की एक खड्गासन प्रतिमा है जो कला की दृष्टि से १३वी शताब्दि की होनी चाहिये। पूरा शिलाखण्ड ४०"×१४" का है जिसमे बीच मे १७"×९" की खड्गासन प्रतिमा है। मूर्ति के दोनो हाथो के नीचे खड्गासन मुद्रा मे २ यक्ष है। शेष शिलाखण्ड मे यक्षिणी की मूर्ति

---

१ राजस्थान के इतिहास के स्रोत—डा जी एन शर्मा पृ.स १६

१ सवतसरे १२ .. महासिहराज्ये पाड्या गोत्रे सा राम चन्द्रप्रभ प्रतिमा कारापिता नरायणा पचवणम मिति।

बनायी गयी है। किन्तु यह पूरी तरह नही बन पायी है किन्तु एक ही तरफ है। यह मूर्ति १२ इ च ऊ ची है। मस्तक पर दो तीन–तीन इ च के हाथी है जिन पर महावत बैठा हुआ हे। भगवान की मूर्ति पर तीन छत्र है हाथियो के नीचे एव मस्तक के आसपास दो किन्नर जाति के देव हैं जो भेरी बजा रहे है। यह मूर्ति गुप्तकालीन प्रतीत होती है।

इसी कला की ५०"×१५" शिलापट्ट से बनायी गयी एक खड्गासन प्रतिमा है जिसमे उक्त कला के अतिरिक्त मस्तक पर तीन छत्रो के ऊपर का भाग १० इंच का है जिसमे चैत्य सा बनाया गया है। बीच मे पद्मासन तथा दोनो ओर एक–एक खड्गासन मूर्तिया उकेरी गई है। जो ५ इ च की है। यक्षिणी के दूसरी ओर चार हाथ वाला पद्मासन मुद्रा मे देव है। उसके ऊपर हाथी है जिसका एक पैर एव सू ड का भाग निकला हुआ है। हाथी के मस्तक पर पैर रखे ६ इ च का सिगोवाला बैल सा है। यह भी १३वी शताब्दि की मूर्ति प्रतीत होती है।

इसी फेरी मे एक देवी की मूर्ति है जिसके चार हाथ हैं। एक हाथ में नारियल, एक हाथ मे बच्चा है। सर पर मुकुट, कानो में कुन्डल, गले मे हार तथा स्तन उभरे हुए है। देवी सिंहारुढ हे। सिंह बैठा हुआ है। पैरो मे पायजेब है। देवी के मुकुट के ऊपर शिलापट पर पद्मासन तीर्थ कर की मूर्ति है। देवी सुखासन मे बैठी है। इसी तरह की एक और देवी की १५"×२४" अवगाहना की मूर्ति है।

मन्दिर मे श्याम पाषाण की नन्दीश्वर द्वीप की चतुर्मुखी प्रतिमा है जिनकी सख्या ५२ हे। जिनमे एक ओर ४ खड्गासन तथा ६ पद्मासन मूर्तिया हैं। इसी तरह की एक अन्य मूर्ति जयपुर के सघी जी के मन्दिर मे विराजमान है।

सबसे प्राचीन मूर्ति सवत् १०५२ की है जो धातु की है तथा २"×३" इंच की है। मूर्ति पर केवल सवत् का ही उल्लेख है।[1] मन्दिर के पास ही भूगर्भ से प्राप्त एक चिन्ह रहित २३"×२६" पाषाण की और भी पद्मासन मूर्ति विराजमान है जो १२वी शताब्दि की है। ऐसी ही दो मूर्तिया और है जिन पर यद्यपि लेख नही है लेकिन कला एव आकृति से ये दोनो ही १२वी शताब्दि की मालूम देती है।

धातु की प्रतिमाओ मे एक सवत् १५४९ की है जिसके लेख मे भट्टारक जिनचन्द्र का नाम दिया हुआ है। लेख अपूर्ण है। एक ७"×१५" की चौबीसी की

---

१ सवत् १०५२ वर्षे.......।

मूर्ति है जिसकी प्रतिष्ठा सवत् १६४२ की फागुण सुदी ५ गुरुवार के शुभ दिन गोपाचल (ग्वालियर) मे सम्पन्न हुई थी। उस समय वहा महाराजाधिराज मानसिंह का शासन था तथा भट्टारक थे शुभचन्द्र के शिष्य जयसेनदेव तथा प्रतिष्ठा कारक थे अग्रवाल जातिय श्रावक खेमल। मोजमावाद मे सवत् १६६४ मे प्रतिष्ठापित एक अन्य चौवीसी की प्रतिमा और है।

मन्दिर मे यन्त्र भी वडी सख्या मे हैं। सवत् १५८४ का एक दशलक्षण का यन्त्र हे जो भट्टारक लक्ष्मीचन्द्र के उपदेश जैसिंहपुरा जातीय श्रावक ने लिखवाया था। यहा ह्रीकार का यन्त्र है जो सवत् १५६० माघ वुदी ८ मडलाचार्य धर्मचन्द्र द्वारा लिखवाया गया था। इसी तरह एक सवत् १५२२ मे लिखा हुआ यन्त्र है जो टूटा हुआ है।

इस मन्दिर मे भट्टारको का खूव आवागमन था। सवत् १७५६ मे यहा भट्टारक जगत्कीर्ति ने चतुर्मास किया और इसी उपलक्ष मे साह कला अजमेरा ने एक स्वर्ग सोपान निर्मित करवा कर उसे मन्दिर मे विराजमान की थी। स्वर्ग सोपान पर अ कित लेख निम्न प्रकार है—

सवत् १७५६ सावण सुदी ११ नरायणा नगरे चन्द्रप्रभ चैत्यालये श्री मूलसघे भट्टारक श्री जगत्कीर्ति जी तत् शिष्य अजमेरा गोत्रीय साह कला तत्पुत्र पाडे पेमा तेन स्वर्ग सोपान कला एना करायँ नरायणा नगर चैत्यालये स्थापितेय स्थापना श्री जगत्कीर्ति श्रीराजेन लिखित।

उक्त मूर्तियो के अतिरिक्त मन्दिर मे और भी सवत् वाली प्रतिमायें हैं जो कला एव सुन्दरता की जीती जागती उदाहरण है।

दिगम्बर जैन छोटा मन्दिर नरायणा

इस मन्दिर मे भी भूगर्भ से उपलव्ध मूर्तिया विराजमान है। इनमे से तीन मूर्तियो पर सवत् ११३५ फागुण सुदी ३ लेख अ कित हैं।[1] एक मूर्ति चन्द्रप्रभ स्वामी की है शेष दो पर कोई चिन्ह नही है। इसी मन्दिर मे सवत् १०८३ माघ

---

१ सवत् ११३५ फागुण सुदी माण्वार जात्य श्रेष्ठि सूजन सुत मथन सुश्रेयोर्थ पितृव्य भातृ माल्हा भार्या मथन सुत चाहड सहिता प्रथम भार्या मनमख वाहुवलिदेव निज श्रेयोर्थ प्रतिष्ठापित।

सुदी १४ को प्रतिष्ठापित आचार्य धरसेन के चरण है।[1] हो सकता है कभी धरसेनाचार्य ने नरायणा की भूमि को पवित्र किया हो। यहा दो और मूर्तिया बहुत ही प्राचीन मनोज्ञ एव कलापूर्ण हैं। इनमे एक सरस्वती की प्रतिमा है।[2] मूर्ति खड्गासन है। तथा श्वेत पाषाण की २० × २४ इ च की है। सिर पर तीर्थंकर की प्रतिमा है तथा 'ओ ह्री सरस्वत्यै नम' शब्द और लिखे हुए है। सरस्वती ह स वाहिनी है। कमडलु माला, पुस्तक एव वीणा युक्त है। अ गुलियो एव नाखूनो की कला अवर्णनीय है। गले मे माला, एव तिरछा हार है।

मन्दिर के दरवाजे पर मन्दिर निर्माण कर्त्ता ने अपनी लघुता निम्न प्रकार व्यक्त की है जिससे पता चलता हे कि इस मन्दिर का निर्माण सवत् १६३६ मे हुआ था

श्री जिनाय नम –मिदर कराणे वाले की लघुताई —
खाजूलाल सुखलाल को तादि पाटणी गोत।
साधर्मी उर थिर रहो, जैन धर्म उद्योत।
सव पचनि मे वीनती, यह जिन मन्दिर पार।
स्वाध्याय व्रत तप भजन, करि उतरो भवपर ॥२॥
सुकल पचमी जेठ की गुनीमै छत्तीस
राजे मदिर पूजन कियो वता धर्म जगीस ॥३॥

रणथम्भौर एव शेरपुर के दिगम्बर जैन मन्दिर

चौहान शासको की जव शाकम्भरी राजधानी थी तव महाराजा पृथ्वीराज प्रथम ने रणथम्भोर के दिगम्बर जैन मन्दिर पर १२ वी शताब्दी के प्रथम पाद मे ही स्वर्ण कलश चढा कर अपनी श्रद्धा समर्पित की थी। वर्तमान मे एक मन्दिर किले के ऊपर है और दूसरा किले के नीचे है जो शेरपुर का मन्दिर कहलाता है। दोनो ही मन्दिर कला एव निर्माण की दृष्टि से कोई उल्लेखनीय मन्दिर नही है लेकिन यह कहा जाता है कि रणथम्भौर के किले के मन्दिर मे सवत् ४ की प्रतिमा है। स्वय लेखक व प० अनूपचन्द न्यायतीर्थ मन्दिर के दर्शनाथ एव मूर्ति लेख लेने की दृष्टि से करीव ३ वर्ष पूर्व वहा गये भी थे लेकिन मन्दिर वन्द मिलने

---

१ सवत् १०८३ माघ सुदी १४ आचार्य श्री धरसेनस्येदं पाद युग्म।
२ सवत् ११०२ बैशाख सुदी ६ श्री नेमिनाथीय समस्त वालयो प्रतिष्ठा कारिते अ० ह्रीं सौ सरस्वति नम.

के कारण मूर्ति लेख नही लिये जा सके। किले के नीचे शेरपुर स्थित मन्दिर यद्यपि विशाल एव कलापूर्ण मन्दिर नही है लेकिन उसमे विराजमान मूर्तिया अत्यधिक मनोज्ञ एव प्राचीन है। मन्दिर के पास मे ही एक विशाल हवेली हे जो यहा के नगर सेठ (श्रावक) की वतलायी जाती है। यह हवेली अपने आज पुराने वैभव पर आसू वहा रही हैं।

शेरपुर सवाई माधोपुर मे रणथम्भौर किले मे जाने वाले सडक के छठे मील के पत्थर के आगे है। सडक के किनारे से १ ५ फर्लागे की दूरी पर मन्दिर है। बस्ती नही है। चारो और घना जगल है। जब सवत् १८२४ से लेकर १८२६ तक वैष्णवो के साम्प्रदायिक उपद्रव हुए तो यह मन्दिर भी उनके उत्पात से नही वच पाया। लेकिन सौभाग्य से वे मूर्तियो की विशालता एव चमत्कारी होने से कोई विशेष हानि नही कर पाये।

इस मन्दिर मे सभी मूर्तिया श्वेत पाषाण की है विशाल है और मनोज्ञ है। किसी समय रणथम्भौर के किले मे एव शेरपुर मे जैनो की घनी वस्ती थी। मन्दिर मे मवसे प्राचीन मूर्ति चन्द्रप्रभु स्वामी की है जिसकी प्रतिष्ठा संवत् १११० माघ सुदी ९ के शुभ दिन हुइ थी। मूर्ति ११ × १४ इच अवगाहना वाली तथा मनोज्ञ है। एक मूर्ति श्वेत पाषाण की हे सवत् १३२० की हैं जिसका लेख मिट गया हैं। केवल निम्न प्रकार पढने मे आता है—

संवत् १३२० चैत सुदी ५ ... शान्ति ... टाल गापाल ने० रा० ... । यह भी मनोज्ञ मूर्ति है। एक श्वेत पापाण की पद्मासन मूर्ति और है जो सवत् १३२६ आषाढ बुदी ९ के दिन प्रतिष्ठित हुई थी। मूर्ति का निशान मिट गया है। लेख निम्न प्रकार है—

सवत् १३२६ आषाढ बुदी ९ श्री कुन्दकुन्दाचार्यान्वये आचार्य भावकीर्ति चरणान्वये गेगा भार्या मामल सुत जगसी भार्या मलहू अलवसी मार्या गौतस प्रणमन्ति नित्य।

इस मन्दिर मे १५२० की पार्श्वनाथ की श्वेत पाषाण की पद्मासन मूर्ति है जो काष्ठा सघ एव माथुरगच्छ के भट्टारक जयसेन के शिष्य द्वारा प्रतिष्ठापित है। इसके अतिरिक्त जीवराज पापडीवाल द्वारा मुडासा शहर मे प्रतिष्ठापित कितनी ही मूर्तिया है तथा नातू गोधा द्वारा मोजमावाद मे संवत् १६६४ मे प्रतिष्ठित मूर्तियां विराजमान हैं। इनके अतिरिक्त स १५८३, सवत् १५१० एव

१५०२ की मूर्तिया उपलब्ध होती है। सवत् १६६४ के बाद की प्रतिष्ठित मूर्तिया मन्दिर मे नही मिलने का अर्थ यह भी हो सकता है कि यह मन्दिर सवत् १६६४ तक की गतिविधियो का विशेष केन्द्र रहा।

मोजमाबाद के मन्दिर

मोजमाबाद मे वर्तमान मे दो मन्दिर एवं एक नशिया है। इनमे दिगम्बर जैन बडा मन्दिर अपनी विशालता एव स्थापत्य कला दोनो ही दृष्टियो से दर्शनीय है। इसके विशाल तीन शिखर दूर से ही प्राणी मात्र को अपनी ओर आमान्त्रित करते है तथा जगत् को सम्यक श्रद्धा ज्ञान एव चारित्र का मानो उपदेश देते हैं। ये रत्नत्रय स्वरूप है। इस मन्दिर का निर्माण सॅवत १६६४ मे महाराजा मानसिंह के प्रधान अमात्य नानू गोधा द्वारा किया गया। तथा उसी समय एक विशाल पच कल्याणक प्रतिष्ठा समारोह का आयोजन हुआ था जिसमे देश के कोने कोने से लाखो की सख्या मे दर्शनार्थी सम्मिलित हुए थे तथा वे ऐसे भव्य मन्दिर एव विशाल एव मनोज्ञ प्रतिमाओ के दर्शन करके आनन्द से झूम उठे थे।

मन्दिर के प्रवेश द्वार के आगे एक विशाल चौक आता है जिसके निज मन्दिर के प्रवेश वाला द्वार का भाग अत्यधिक कलापूर्ण है इसे आठ भागो मे विभक्त किया गया है तथा श्वेत एव लाल पाषाण पर कला की अद्भुत कृतियो को उकेरा गया है। मुख्य द्वारो पर विभिन्न भाव कृत्यो के साथ देव देवियो के चित्र है। सभी देव एव देविया पूर्णत समलंकृत तथा साज सज्जा सहित दिखाये गये हैं। एक चित्र मे सरस्वती अपने हाथ मे हस को मोती चुगा रही हैं। इन देवियो को विभिन्न नृत्य मुद्राए देख कर ऐसा आभास होने लगता है मानो दर्शन गण किसी इन्द्र सभा मे आ गये हो। कही पर हाथी अपनी सूंड मे जल भर कर तीर्थ कर का अभिषेक कर रहा है तो कही सिंह वाहिनी देवी की मूर्ति दिखलाई देती है। सचमुच लाल एव श्वेत पाषाण पर दर्शित यह कला भारतीय एव राज स्थानी कला का अच्छा प्रस्तुतीकरण है।

इस मन्दिर मे दो भूमिगत मन्दिर भी है। जिनमे तीर्थ करो की भव्य विशाल एव कलापूर्ण मूर्तिया विराजमान है। सभी मूर्तिया संवत् १६६४ मे प्रतिष्ठित है। अपने प्रतिष्ठाकारक नानू गोधा की कीर्ति को अनत काल तक स्थायी रखने को उद्यत है। भगवान आदिनाथ की जो विशाल पद्मासम मूर्ति है उसमे कलाकार ने अपनी समस्त कला को मानो उडेल दिया है। यह उसके वर्षो

की साधना होगी वास्तव मे ऐसी सौम्य एव कला पूर्ण मूर्तियाँ बहुत कम मन्दिर मे उपलब्ध होती है।

इस मन्दिर मे प्राय सभी मूर्तिया सवत् १६६४ मे प्रतिष्ठित मूर्तिया है कुछ एक चवरी मे विराजमान धातु की प्रतिमाए एवं यन्त्र आदि हैं।

छोटा मन्दिर मे भी एक भूतिगत वेदी है जिसका अभी इसी वर्ष जीर्णोद्धार हुआ है। यहा एक नशिया है जो नगर के वाहर स्थित है। नशिया भी प्राचीन है तथा विशाल क्षेत्र मे स्थापित है। नगर के वाहर दक्षिण पश्चिम की ओर एक त्रिपोलिया है जो तालाव के किनारे स्थित है। वर्तमान मे केवल उसका मुख्य द्वार ही अवशिष्ट है। यह भी जैन सस्कृति का केन्द्र रहा था। द्वार के ऊपर दोनो ओर तीर्थ करो की मूर्तिया उकेरी हुई है जिससे यह स्थान भी जैनो के उत्सवो आदि का केन्द्र रहा होगा ऐसा प्रतीत होता है।

———

चतुर्थ अध्याय

प्रदेश की वर्तमान स्थिति

शाकम्भरी प्रदेश का वर्तमान स्वरुप पूर्णत वदला हुआ हे। राजस्थान निर्माण के पूर्व साभर पर जयपुर एवं जोधपुर दोनो राज्यो का अधिकार था। साभर के कुछ गावो पर जयपुर एव जोधपुर के अधिकारी वारी वारी से शासन किया करते थे इसलिये साभर शामलात के नाम से प्रसिद्ध हो गया था। लेकिन आजकल साभर प्रदेश जयपुर जिले के अन्तर्गत एक उपजिला हे जिसके अधीन दूदू, फुलेरा एव फागी की तहसीले आती है। इन तीनो तहसीलो का क्षेत्रफल ३६११ वर्ग किलोमीटर है। इन तहसीलो मे ४५२ गाव, कस्बे एव नगर आते हे जिनकी जनसख्या २ लाख ८४ हजार के आस पास है। वर्तमान मे साभर, फुलेरा एव जोवनेर मे नगर पालिकाएं स्थापित है।

जैन धर्म एव सस्कृति की दृष्टि से साभर का पूरा प्रदेश ही दिगम्बर जैन धर्मानुयायियो का अब भी केन्द्र है। पूरे प्रदेश के ४५२ गावो मे १०० से भी अधिक गावो मे जैनो की बस्तिया हैं उनके विशाल एव कलापूर्ण मन्दिर हैं, उनमे प्रतिष्ठित प्राचीन एव मनोज्ञ मूर्तिया है। शास्त्र भण्डार है। कुछ प्रमुख गावो मे जैन विद्यालय है। पारमार्थिक औषधालय हैं तथा जन कल्याणकारी और भी सस्थाए है। वर्तमान मे प्रमुख केन्द्रो मे साभर, फुलेरा, जोवनेर, भादवा, भैसलाना, रेनवाल (किशनगढ) दूदू, वीराज, मोजमावाद, नरायणा, फागी, चूरू, चकवाडा आदि प्रमुख ग्राम हैं जहा दिगम्वर जैन समाज की अच्छी सख्या है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व अधिकाश ठिकानो मे जैनो का शासन मे प्रमुख हाथ था। उनके कामदार जिसे हम प्रमुख अधिकारी कह सकते है, जैन ही हुआ करते थे। सैकडो वर्षो से वश परम्परागत एक के पश्चात् दूसरे व्यक्ति कामदार होते थे और जिन्होने जनता एव ठिकाने की भारी सेवा की थी। जागीरदारो का उन पर पूर्ण विश्वास था और वे अपने जागीर का सारा कार्य उन पर छोड दिया करते थे। यदि किसी ग्राम मे एक भी घर जैनो का होता था उसका भी गाव मे पूरा प्रभाव था।

राजस्थान वनने के पश्चात् जागीरदारी प्रथा समाप्त हो गई, इससे जैनियो को भी रोजगार की दृष्टि से पर्याप्त हानि हुई और उनका वश परम्परागत धन्धा

समाप्त हो गया। इसलिए अधिकाश ग्रामवासी अपने गावो को छोड कर नगरो मे आ चुके है या आ रहे है। गावो की आवादी समाप्त हो रही है और नगरो की सख्या वढ रही है। कुछ ग्राम तो ऐसे हो गये है जहाँ जैनो का एक भी घर नही रहा लेकिन वहाँ अव मी मन्दिर है जिसकी सेवा पूजा करना भी कठिन हो गया है। मोजमावाद के पास घमाणा गाव मे मन्दिर है लेकिन एक भी घर जैनो का का नही है और मोजमाबाद जैन समाज को ही वहा का प्रवन्ध करना पडता है लेकिन यह स्थिति छोटे गावो की ही नही हे तहसील स्तर के कस्वो की स्थिति मे भी परिवर्तन हो रहा है। स्वय मोजमाबाद मे २५–३० वर्ष पहिले १०० घर थे लेकिन आज वहा आज आधे घर रह गये है और अधिकाश जैन जयपुर आकर रहने लगे हैं। वोराज, सावडदा, छप्पा, चोरू, चकवाडा भादवा, भैसलाना, मढा, जोवनेर जैसे अच्छे गावो की स्थिति भी कमजोर होती जा रही है। गाँव ऊजड रहे हैं और शहर वस रहे है। मन्दिरो की प्रक्षाल पूजा होना भी कठिन हो रहा है। इसलिये छोटे छोटे गावो के जैन मन्दिरो की सुरक्षा एवं उनकी सेवा पूजा का विकट प्रश्न समस्त जैन समाज के सामने है जिसका समाधान निकाला जाना चाहिये।

लेकिन प्रदेश के कुछ कस्वो की स्थिति आज भी अच्छी है। जनसख्या मे जिस अनुपात मे वृद्धि हुई है यद्यपि जैनो को उतनी सख्या अभी तक नही वढ पायी है लेकिन फिर भी स्थिति मे पर्याप्त परिवर्तन हो रहा है। साभर प्रदेश के आज जैनो के प्रमुख केन्द्र साभर, नरायणा, दूदू, मोजमावाद, फागी, जोवनेर रेनवाल जैसे कुछ कस्वे है जिनमे जैनो की अच्छी सख्या कही जा सकती है। और आज भी जैन समाज का गाव पर अच्छा प्रभाव है। मोजमावाद मे दिगम्वर जैन औषद्यालय स्थापित हे जो वर्षों मे ग्रामवासियो की सेवा कर रहा है। जोवनेर मे अभी ८–१० वर्ष से जैन गुरुकुल चल रहा हे जिसमे जैन धर्म के उच्च अध्ययन की व्यवस्था है। गुरुकुल राजस्थान सरकार से मान्यता प्राप्त शिक्षण सस्थान है। रेनवाल मे पहिले दिगम्वर जैन विद्यालय था जो ४० से भी अधिक वर्षो तक चली होगी जहा जैन धर्म के अध्ययन की अच्छी व्यवस्था थी। इसी रेनवाल मे श्रीलाल गगवाल पारमार्थिक ट्रस्ट फड स्थापित किया हुआ है जिसके माध्यम से ज्ञान प्रचार एव साहित्य प्रकाशन का कार्य होता रहता हे। इसी तरह मोजमाबाद मे अभी चोधरी प्रकाशन सस्थान की स्थापना हुई है जिसका उद्देश्य जैन धर्म, सस्कृति एव इतिहास पर आधारित लघु पुस्तिकाए प्रकाशित कराना है। चोरू मे जो दिगम्वर जैन औपधालय है वह इस प्रदेश का प्रसिद्धि

प्राप्त औषधालय है जो वर्षों से जनता की नि शुल्क सेवा कर रहा है। इसी तरह के औषधालय अन्य गावो मे भी स्थापित है।

साभर प्रदेश मे जिस प्रकार प्राचीन काल मे अनेक विद्वानो को, सन्तो को एव समाज सेवियोको जन्म दिया उसी प्रकार इस युग मे प्रसिद्ध दार्शनिक विद्वान प० चैनसुखदास न्यायतीर्थ जैसे विद्वान को जन्म देने का सौभाग्य प्राप्त किया। वैसे आज भी इस प्रदेश मे जन्म लेने वाले बीसो विद्वान्, राजनीतिज्ञ समाज सेवी है जो देश के विभिन्न भागो मे साहित्य एव समाज सेवा मे व्यस्त है और जो समाज के प्रतिष्ठत व्यक्ति माने जाते हे। हम यहा ऐसे कुछ महानुभावो का परिचय प्रस्तुत कर रहे हैं—

साभर मे वर्तमान मे जिन महानुभावो ने सभी दृष्टियो से उल्लेखनीय सेवाए की है उनमे सर्व श्री विरधीलाल सेठी, प्रकाशचन्द्र काला एडवोकेट, मिलाप चन्द जैन लल्लूचन्द वडजात्या एडवोकेट, पूरणचन्द्र लुहाडिया, ऐडवोकेट के नाम उल्लेखनीय है। श्री विरधीलाल सेठी का पूरा जीवन ही समाज ऐव देश सेवा में व्यतीत हुआ है। उन्होने राजस्थान वैंक के जनरल मैनेजर पद पर रहते हुए समाज की अच्छी सेवा की थी। वयोवृद्ध होने पर भी उनके हृदय में समाज सेवा की भावनाएं हैं। आजकल आप राजस्थान प्रान्तीय भगवान महावीर २५०० वा निर्वाण महोत्सव समिति के प्रधान मन्त्री हैं तथा राजस्थान दिगम्वर जैन परिपद के वर्षों से अध्यक्ष है। जैन धर्म और मूर्ति पूजा नामक पुस्तक आपने सन् १९२९ में ही लिखी थी। आपके अनेक पत्रो मे समाज सुधार के सम्बन्ध मे लेख प्रकाशित होते रहते है।

श्री प्रकाशचन्द काला साभर के अच्छे समाज सेवी हैं। आप एडवोकेट हैं तथा साभर नगरपालिका के अध्यक्ष भी रह चुके है। सामाजिक कार्यों मे अच्छी रुची लेते हैं। श्री मिलापचन्द जैन कासलीवाल राजस्थान सरकार मे सैशन जज है आप अपनी ईमानदारी एव कर्त्तव्यनिष्ठा के लिये प्रसिद्ध है। आजकल आप अलवर मे सेशन जज है। श्री लल्लूचन्द वडजात्या जोवनेर के निवासी है तथा साभर मे वकालात करते है। समाज सेवा मे आपकी भी रुचि हे। श्री पूरणचन्द लुहाडिया धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति है। साभर के प्रसिद्ध वकीलो मे से है तथा देश एवं समाज सेवा क्षेत्र मे अच्छा कार्य किया है। साभरे के अन्य समाज सेवियो मे श्री कपूरचन्दर एडवोकेट एव श्री भवरलाल वोहरा का नाम भी उल्लेखनीय है।

साभर के समीप ही स्थित जोबनेर ने भी जैन समाज को कितने ही विद्वान सन्त एव साहित्य प्रेमी दिये हैं। महापण्डित टोडरमल जी का बाल्यकाल भी यही बीता हो ऐसी पूर्ण सम्भावना है। वर्तमान मे जोबनेर के समाज सेवियो मे श्री सुगनचन्द पाटनी, कपूरचन्द पाटनी, सत्यन्धर कुमार आदि के नाम उल्लेखनीय है। श्री सुगनचन्द पाटनी—जोबनेर के सर्वाधिक लोकप्रिय समाज सेवी हैं। जैन गुरुकुल जैसी शिक्षण सस्थाए आपके प्रयास से चल रही हैं। सामाजिक कार्यो मे आपकी विशेष रुचि रहती हैं। श्री कपूरचन्द पाटनी युवा समाजसेवी है। राजनीति एव सामाजिक क्षेत्र दोनो मे आप अच्छा कार्य कर रहे है। आपके जीवन पर प० चैनसुखदास जी की पूर्ण छाप है। ला ग्रेज्युट होने के पश्चात आप जयपुर मे टैक्स सलाहकार का कार्य कर रहे है। राजस्थान जैन सभा के अध्यक्ष एव अन्य कितनी ही सामाजिक सस्थाओ के सक्रिय कार्यकर्ता हैं। श्री सत्यन्धर कुमार जोबनेर के पुराने सामाजिक कार्यकर्ता हैं।

साभर एव फुलेरा तहसील मे भादवा ग्राम का नाम सबसे अधिक उल्लेखनीय है जिसने प. चैनसुखदास जी न्यायतीर्थ जैसे विद्वान् रत्न को जन्म देने का सौभाग्य प्राप्त किया। पंडित जी साहब का परिचय पहिले दिया जा चुका है। राजस्थान मे जो कुछ सामाजिक एव साहित्यिक जागृति दिखायी देती है उसमे पडित जी साहब का प्रमुख हाथ रहा है। सारे प्रदेश मे आज भी आपके ही शिष्य कार्य कर रहे हैं। वर्तमान मे प सत्यन्धर कुमार सेठी समाज के नर रत्न है जो उज्जैन मे रहते हुए मध्यप्रदेश के सामाजिक जीवन मे प्रशसनीय कार्य कर रहे है। आप जैसे निर्भीक सामाजिक कार्यकर्त्ता बहुत कम मिलते है। पुरातत्व सग्रह की ओर सेठी जी की बहुत रुचि है और इसीलिये मध्यप्रदेश के विभिन्न स्थानो मे घूम घूमकर आपने उज्जैन मे अच्छा सग्रहालय स्थापित कर दिया है। सेठजी ओजस्वी वक्ता है अच्छे लेखक है तथा मध्यप्रदेश के सामाजिक क्षेत्र के सर्वाधिक उल्लेखनीय कार्यकर्त्ता है। विभिन्न सस्थाओ के सचालन मे आपका विशेष हाथ है। साभर प्रदेश को आप जैसे व्यक्तियो पर गर्व होना चाहिये।

भादवा मे जन्म लेने वाले दूसरे उल्लेखनीय विद्वान् प कैलाशचन्द शास्त्री हैं। शास्त्री जी पडित चैनसुखदास जी के अनुज हैं। आप अच्छे लेखक एव सामाजिक कार्यकर्त्ता हैं। वर्तमान मे राजश्री पिक्चर्स जयपुर के प्रमुख अधिकारी हैं। आपका पूरा परिवार ही उच्चशिक्षित है। श्री प्रकाशचन्द्र ठोलिया भी भादवा ग्राम के निवासी हैं तथा आजकल कलकत्ता मे जूट मिल मे अधिकारी हैं। सामाजिक कार्यो मे आपकी भी अच्छी रुचि रहती है। श्री सोभागमल रावका पडित जी साहब

के भतीजे हैं। आप अच्छे पत्रकार है तथा जयपुर के लोकप्रिय पत्र राष्ट्रदूत के उपसम्पादक है।

भादवा ग्राम के निवासियो मे डा शम्भुसिह मनोहर भी उल्लेखनीय विद्वान् है। आप राजस्थानी भाषा के प्रसिद्ध विद्वान् है तथा वर्तमान मे राजस्थान विश्व-विद्यालय के हिन्दी विभाग मे प्राध्यापक है। डा मनोहर जैन साहित्य के विशेष प्रशसक है और अपने आचार एव व्यवहार से पूर्णत जैन है। आपके पिता स्व सवाईसिह जी भी अच्छे शिक्षा शास्त्री थे।

फुलेरा के श्री शान्तिस्वरूप गगवाल वर्षों से सामाजिक क्षेत्र मे कार्य कर रहे है।

मोजमाबाद तहसील क्षेत्र का प्रमुख कस्बा है जहा सैकडो वर्षो से जैनो का पूर्ण प्रभाव रहा है तथा जिसके नाम से ही प्रत्येक व्यक्ति के हृदय मे एक श्रद्धा सी उत्पन्न होती है। वर्तमान मे सामाजिक कार्यकर्त्ताओ मे श्री गम्भीरमल चौधरी, रतनलाल बोहरा, ताराचन्द भोसा, सोभागमल चौधरी, समीरमल चौधरी के नाम उल्लेखनीय है। श्री फूलचन्द बोहरा यहा के वयोवृद्ध सामाजिक कार्यकर्त्ता हैं। गम्भीरमल चौधरी सामाजिक एव ग्राम विकास क्षेत्र मे कार्य करने वाले प्रमुख युवा कार्यकर्त्ता है तथा समाज के प्रत्येक कार्यो मे उत्साह से भाग लेते है। चौधरी प्रकाशन सस्थान के नाम से आप छोटी छोटी पुस्तको का प्रकाशन करा रहे है। अभी सन्मति सूत्र एव शतकचूर्णि जैसी पुस्तकें इस संस्थान की ओर से प्रकाशित हो चुकी है। श्री ज्ञानचन्द चौधरी उच्च शिक्षित युवक है और जयपुर मे कार्य करते हैं। इसी तरह ताराचन्द भौसा काठेडा प्रदेशीय महावीर निर्वाण महोत्सव समिति के मन्त्री हैं।

रेनवाल (किशनगढ) साभर प्रदेश का जैन संस्कृति की दृष्टि से प्राचीन क्षेत्र रहा है। लेकिन वर्तमान मे रेनवाल मे जैनो की बस्ती नही है और उसके समीप ही किशनगढ बस चुका है जहा जैनो की अच्छी बस्ती है। यहा का सागाका परिवार प्रारम्भ से ही सम्पन्न एव धार्मिक रुचि वाला परिवार रहा है। जिसके द्वारा निर्मित भवन मे चिकित्सालय एव कन्या विद्यालय चल रहे है। वर्तमान मे श्री सीताराम जी सागाका धार्मिक रुचि वाले श्रावक हैं। इस प्रकार इसी ग्राम मे श्री गुलाबचन्द गगवाल उत्साही सामाजिक कार्यकर्त्ता हैं तथा श्रीलाल पारमार्थिक ट्रस्ट फण्ड के सयोजक है।

अवशिष्ट

महाकवि धनपाल

साभर प्रदेश को समलकृत करने वाले अपभ्र श कवियो मे महाकवि धनपाल का नाम विशेपत उल्लेखनीय है। धनपाल गुजरात देश के मध्य मे पल्हणपुर या पालनपुर के निवास थे। इनके गुरु आचार्य प्रभाचन्द्र थे और उन्ही के पास रहकर इन्होने शास्त्राभ्यास किया था। कवि के पितामह भोवाइ, एव पिता सुहडप्रभ थे। कवि की माता का नाम सुहडादेवी था। इनके दो भाई भी थे जिनका नाम सतोप एव हरिराज था।

कवि ने सवत् १४५४ वैशाख शुक्ला त्रयोदशी सोमवार को वाहुवलिचरित की रचना की थी। इसमे १८ सधिया है और अपभ्र श भापा का सुन्दर काव्य है। प्रस्तुत काव्य मे वाहुवलि के जीवन का विस्तृत वर्णन किया गया है। कवि ने इस ग्रन्थ का नाम 'काम चरिउ' भी लिखा है। कवि साभर को यात्रा करने आये थे और उन्होने वाहुवलि चरित को प्रशस्ति मे साभर के चौहान नरेश का उल्लेख किया है। उमका मत्री गोकरगु साहु था। जो जिनेन्द्र भगवान के चरणो का उपासक था। उस समय साभर का शासक का कर्णदेव था तथा सोमदेव मत्री का भाई था। इनका अभयचन्द्र सुपुत्र था तथा अभयचन्द्र के जयचद एव रामचन्द्र नाम के दो पुत्र थे। ये सभी जिनेन्द्र भगवान के परम उपासक थे तथा विविध व्रतो को पालने वाले थे। इससे स्पष्ट है कि धनपाल कवि का साभर से निकट का सम्बन्व था।

पुणु सभरि णरिंद महि भु जिय
जायव-वसु व्वभर्ते रजिय।
असवतु चहुवाण पुहइ पहु
तहु मतिउ जदुवसिउ जसरहु
पहुगण पत्तिहु अउ धरणीयलि
आसानुरि सुरि पय पकय अलि
साहुणाम गोकणु मती तहु
जिणवर- चरणभरोहु-महुलिहु
हुउ सभरि णरिंद महिवालउ
कण्णुदवु णामपय - पालउ
सोमदेव तहो मति सहोयस
सयल कलालकउ ण ससहरु

घत्ता

पुणु सारगु णरिंदु अभयचद तहो णदणु।
तहो सुअ हुउ जयचद रामचद णामे पुणु।

नामानुक्रमणिका

अकलक २
अ कलक निकलक चौपाई ४४
अकवर नगर २१
अजयमेरु ६ ८ ६ १५
अजमेर १ ३ ४ १५ १६ २० २४ २६ २८ २६ ३० ३१ ३३ ३४ ३५ ३७ ३८ ४० ४३ ४४ ४५ ४६ ४७
अजयगढ १५
अजयपाल ५
अजीतसिंह ६
अजीतमती १८
अजीर्णगढ १५
अढाई द्वीप २८
अध्यात्म वारहखडी १
अध्यात्म रहस्य ५१
अर्गलपुर जिनवन्दना ५१
प अनन्तराम २५
अन्हलदेव ६
अनन्तकीर्ति २५ ३० ३६ ३७
अनन्त चतुर्दशी पूजा ४२
अनन्तनाथ पूजा ४२
अनूपचन्द न्यायतीर्थ ५० ५४ ६५
अर्णोराज ३३
अमरावती ३७
अमरसिंह ५४
अमरेन्द्रकीर्ति ३६ ४३
महाराजा अभैसिंह ७ २०
अभयचन्द ७४
अलवर ५४
अहिच्छत्रपुर ११
अहिपुर ११

आगरा १३
आत्मानुशासन टीका ५० ५१ ५६
भगवान आदिनाथ ५४ ५६ ६७
आदि पुराण ४ १३ २३ ५१ ५४ ५८
आमेर ३ ४ १० १४ २० ३४ ३५ ६२ ६४
आवा ३ ४
आसजी २३
आसलपुर २६
आराधना पजिका ३८
आशाधर १४ १८ ४५

इन्दौर १७
इल्तुतमिश ५
ईडर ४०
ईश्वरीसिंह ६

उत्तरपुराण ५० ५६
उदयराज २५

उदयराम ३०
उदयपुर २ ३
प उदयसिंह १२
महाराजा उदयसिंह ६ ७
उमास्वामी २
ऊदलदे १२
औरगजेव ६ ८
औसिया ४

कक्कसूरि ११
कथासग्रह ४४
कनककीर्ति ३७
कन्हैयालाल ३२
कपूर चन्द पाटनी ७२
कपूर चन्द ७२
कर्म प्रकृति ग्रन्थ १३
डा कस्तूर चन्द कासलीवाल ५०
कालाडेहरा २९ ३० ४४
काष्ठा सघ ६६
किशनगढ १० २९ ३१ ३२ ५०
किशनसिंह ३१
कुन्दकुन्दाचार्य २३ ५२ ५४ ६६
महाराणा कुम्भा ५
कुशलसिंह ३०
कुशलगढ १
कैलाशचन्द्र शास्त्री ७२

खण्डेला ६ ९
खगारोत ६
खाजूलाल ६५
खरखडी ६
खरतर गच्छ ११

खुशालचन्द २३ ४८
गगाराम २५
गजपथ मण्डल पूजन १३
गम्भीरमल ७३
ग्वालियर १५
गिरधर साह २५
गुणचन्द्र गोत ५३
गुणचन्द्र ४१ ५६
गुण भद्र ३१
गुजरात ५ ११
गुलावचन्द २५
गुलावचन्द गगवाल ७३
श्राविका गोगलदे १४
गोतमस्वामी चरित्र ५८
गोतम स्वामी २४ ४३ ६६
गौरीशकर ५
गौकगु ६८

धर्मकीर्ति ४०
धर्मकीर्ति गीत ५३
धर्मचक्र पच १२
धर्मचन्द १६ २४ ३६ ४२ ४३ ४८ ४९ ५८ ६४
धर्मदास १६ ३१ ३९
धर्मपरीक्षा ५७
धनकुमार चरित्र ३१
धनद सेठ ११
महाकवि धनपाल १४ ३३ ६८
धर्मपाल सवाद ४४
धमाणा २० ६९ ७०
धर्मविलास ३१
धर्मसग्रह श्रावकाचार १२ ४५ ५९

धर्मसूरिस्तवन ८
आचार्य धरसेन १८ ६५
द्यानतराय ५३

चकवाडा ६१ ६६
चन्दनषष्ठि व्रतपूजा ४४
सम्राट चन्द्रगुप्त ६
चन्दप्रभु ४० ४५
चन्द्रकीर्ति ३६
चन्द्रप्रभ चरित्र ४८ ५३
चतुर्दशी चौपाई १६
चाकसू ३ १० १४ २७
चादखेडी ४
चूरू ६६ ७०
चित्तौड १ २ १० १४
चोरू ६८
चौमू ३१
प चैनसुखदास ३२ ६२ ६६

छप्पयां ६६ ७०
छीतर ठोलिया २० २१ ४७ ५३ ६०

जगतकीर्ति १० १६ ३४ ३५ ६२ ६४
जगसी ६६
जम्बूस्वामी चरित्र ४
जम्बूसामि चरिउ ८
जम्बू द्वीप पण्णत्ति २
जयदेव २८
जयपुर १ ३ ४ ६ ७ १० ११ १२ १८ २० २१ २६ ३० ३१ ४५ ४७
जयचन्द १७ २६
जयकीर्ति १३
जयसेन ६६
जयानन्द गणि १२
जमनालाल ३२
ज्वाला माता २६
जवाहरलाल ५५
जहागीर ६
जागलदेश ११
जिनदत्तसूरि ११ १६
जिनचन्द्र ३ १० ११ ३४ ३५ ४५ ५० ५६ ६२

जिनचन्द्राचार्य १४
जिनवल्लभ ११
जिनेन्द्र व्याकरण २३ ५४
जिनदास १३ १६ ४५ ४६ ५७
जिनसेन ४ ६
जिनपति सूरि १०
जिनप्रतिमा स्वरूप १७
जिनसहस्र नाम १८
जीवनदास २४
जीवराज पापडीवाल ६६
डा जैकोवी ३
जैनदर्शनसार ५०
जैसलमेर १ ३ १६
जैसिहपुरा ४८ ६४
जोबनेर ३ ६ ७ १० १७ २६ २७ २८ ३४ ३७ ४० ४१ ४८ ५६ ६१ ६८ ६६ ७० ७२
जोधराज २२ २८ ४३
जोधपुर ६ ७ ११ २१ २५

झालावाड २
झालरापाटन ३

पं० टोडरमल १ २८४७ ४८ ५२
टोडारायसिंह ३ १२ ४६ ६२
कर्नल टाड १६
टीकमचन्द ५६
टोक २

डालूराम ३१
डीडवाना ५ १०
डूगरपुर

महाकवि तुलसोदास ४६
तुलसीराम ३०
तत्त्वार्थ सूत्र ३८
तेजमती १८
ताराचन्द भौंसा ७३
दौलतराम १६ ३८
देहली ६ ६ १० १४ २७ ३४ ३८ ४० ४५ ४८
देवेन्द्रकीर्ति ३ १३ ३४ ३६ ३७ ४० ४३

दौलतराम १ १७ २१ २५ ३०
दादूपथ १६
दार्शनिक के गीत ५०
दुर्जनसाल २५
दोदराज १६
देवयानी ५ १४
दूदू १० ३१ ६८
पं० दामोदर ४८
दयाराम सोनी ४८
द्रव्यसग्रह वृत्ति १५
देवीराम ४१

पद्मपुराण १

पद्मसेन ६१
पन्नालाल १७ २६ ५४ ५५
पर्श्वनाथ ६ ३२ ३६
पचपरमेष्ठी पूजा ६
पाली २
पद्मनन्दि १ २ १० ३६ ३७ ३६ ४० ५३ ५६

परमात्म प्रकाश ३८
प्रमेयकमल मार्तण्ड ३८
पार्श्वनाथ चौपाई ४८
पार्श्वनाथ स्तोत्र ४२
पेथडशाह ११
प्रभाचन्द्र २ १० १६ १८ ३४ ३८ ३६ ५८ ६८

प्रवचनसार १४
प्रश्नोत्तरश्रावकाचार ५६
प्रक्षालकीर्ति १६
पृथ्वीराज ८ १५
प्रीत्यकर चरित्र ५० १६
प्रकाशचन्द काला ६६
पूरणचन्द ६६
पालनपुर ६८
पाल्हणपुर ६८
प्रकाशचन्द ठोलिया ६२

फर्गुसन १६
फिरोजखान ५
फिरोजशाह १ १६ ३४ ३८ ३६ ४५
फुलेरा १६ २६ ३१
फागी ६८
फूलचन्द वोहरा ७३

वखतसिंह वेरीसाल २५
महाकवि वनारसीदास ५४
वसन्तकीर्त्ति १६
वसन्तीदेवी ३२
वगाल २६
ब्रह्मविलास ३१
वाकीदास रीख्यात २६
विहार ६
वीकानेर २
वुद्धिप्रकाश ५१
वोराज ६८ ६६
वाहुवलि चरित्त ७४
पाण्डे वीसल ३०
वीमलदेव २६
वुधराज ५१
वू दी २ ३ १६ ५४

भगवतीदास ३१
भक्तामरस्तोत्र १६
भक्तामर पूजा ४२
आचार्य भद्रवाहु ६
भद्रवाहु चरित्र ५० ५६
प० भवरलाल न्यायतीर्थ ५०
भवरलाल वोहरा ६६
भण्डारकर ३
भरतपुर १ ३ ४०
भादवा १० ३१ ५० ६८ ६६ ७२
भानुकीर्त्ति १२ ३६ ३७ ४२
भारमल ६
भावकीर्त्ति ६६
भुवनकीर्त्ति १६ ३१ ३५ ३७ ३८ ४५
भुवनभूषण ३० ३७ ३८ ४४
भुजगनगर ११
भोजराज ६ ६०
राजा भोज १६
भोपाल २०
मलहू ६६
महावीरप्रसाद ३२
भगवान महावीर ६ २६ ३० ३२ ३३ ३७ ४५

महेसदास २५
महेश्वरसूरि १४
महेन्द्रकीर्त्ति ३० ३७ ४८
महाराष्ट्र २७ ३७
मढा ६६
मार्कण्डेयपुराण १३
मायुरगच्छ ६६
माणकचन्द १४
(महाराजा) माधोसिंह ६
माडोर १
(महाराजा) मानसिंह १६ २० २१ २५ ४७
मामल ६६
मिलापचन्दशास्त्री ५० ६६
मु डासा ६६
मुनीन्द्रकीर्त्ति ३७
मुजाहिद खा ५
मुस्तफसर ५
मुहम्मद गोरी ५
मेडता १०
प० मेधावी १२ ४५
मेवाड ६
मोकल ५

शान्तिनाथ चरित्र २५
शान्तिकीर्ति १६
शालिहोत्र ३०
शाहपुरा ५६
शालिभद्र चौपाई ४४
शिव पुराण १३
शुभकीर्ति ३३
श्रीप्रभनगर ५७
श्रीमहावीर जी ३४
श्रीभूषण गीत ५३
श्रेयंकर मुनि २५
श्रेणिक चरित्र २५ ४४
श्रावकाचार १२ ४४ ५९
शुभचन्द्र ३ १० २५ ३४ ४० ५९
श्रीभूषण १२ ३६ ४२ ४८
श्रुतस्कध पूजा ४३
श्रीलाल गगवाल ६९
शेरपुर ५८ ६५ ६८
क्षेमकीर्ति ३५
क्षेमेन्द्रकीर्ति १३ ३६

षट्कर्मोपदेशरत्नमाला १२ २३
षोडशकारणभावना ५०

सकलकीर्ति १ ३ १० २५ ५० ५३
सकलकीर्तिरास ३८
सकलतीर्थस्तोत्र १८
सकलभूषण ३६
सम्मेदशिखर ३५
समन्तभद्र २ ९ ४५
समयसार २८ ३८ ५६
समाधितन्त्र २८
सम्यक्त्वकौमुदी ५२
सरस्वती लक्ष्मीसवाद ५३
सरस्वती ४०
सघीजी का मन्दिर ४०
संबोध पचासिका ४३
सस्काराव सग्रामसिंह ६
सदासुख ५५
सपादलक्ष ४-५-११
सवार्थसिद्धि ३०
महाराजा सवाई जयसिंह ६
सत्यन्धरकुमार सेठी ५०-७२
सप्तर्षि पूजा ४३
सवाई माधोपुर २,६६
सहस्रकीर्ति २७-३६
सहस्रनाम पूजा ४३
सहारनपुर १४
समीरमल ७३
सारखूण १०
सारखूणिया ६९
सागवाडा ३४
सागानेर ३ ४ १० १९ २८ ३५ ४० ४६
सामुद्रिक पुरुष लक्षण २८ ५२
साभर ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० १४ ३३ ३४ ४६ ४७ ४९ ५० ५६ ६१
साहिवराम २५
साहनिरमल १८
सावडदा ६७ ७०
सिद्धसेन सूरि ११ १२ ३३
सिद्धचक्र पूजा ४२
सिद्धान्तसार १४
सिभुराम २५
सिभुदास २५
सिरोही ७